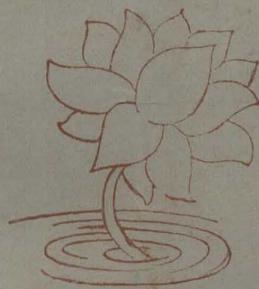


શ્રી મહેવિર જીના સત્ત્વાય મકાશા

જૈન તત્ત્વજ્ઞાન, જૈન સાહિત્ય, જૈન ધર્મ અને જૈન
ધર્માસ્તકારના વિષયો ચર્ચાતું, શ્રી જૈનધર્મ સત્ત્વપ્રકાશક
સમિતિનું પ્રતિકાર વિષયક માસિક મુખ્યપત્ર.



તત્ત્વો:

શાહુ ચીમનલાલ ગોઠળદાસ

વર્ષ ૨]

કૃમાંક ૨૨

[માન્ડ ૧૦

ACHARYA-SRI KAILASSAGARSURI GYANMANDIR
SHREE MAHAVIR JAIN ARADHANA KENDRA

Kohar, Gandhinagar - 382 007.
Ph. +91 23 76252, 23276204-05
Fax: (079) 23276249

श्री जैन सत्य प्रकाश

(मासिक पत्र)

विषय-दर्शन

१ श्री सरस्वती विंशिका	: आचार्य महाराज श्रीमद् विजयपद्मसूरजी	: ५११
२ समीक्षान्नमाविष्करण	: आचार्य महाराज श्रीमद् विजयलालग्नसूरजी	: ५१३
३ श्रीशंखेश्वरपर्वतनाथ स्तोत्रम्	: मुनिराज श्री वाचस्पतिविजयजी	: ५१६
४ दिग्ंबर शास्त्र कैसे वने ?	: मुनिराज श्री दर्शनविजयजी	: ५१७
५ सर्वमान्य धर्म	: आचार्य महाराज श्रीमद् सागरानन्दसूरजी	: ५१९
६ सहेट भेटे	: मुनिराज श्री दर्शनविजयजी	: ५२६
७ बाहुमेन	: स्व. मुनिराज श्री हिमांशुविजयजी	: ५२७
८ गुजरातनी जैनाश्रित कला	: श्रीयुत साराजाई भण्डारीलाल नवाच	: ५३१
९ “जैनहर्षन”ने उत्तर	: आचार्य भद्राराज श्रीमह सागरानन्दसूरजी	: ५३५
१० अक्षय तृतीया	: आचार्य भद्राराज श्रीमद् विजयपद्मसूरजी	: ५३८
१० पुरातन धर्मिणास अने स्थापत्य		
प्र चीन लेख संग्रह	: मुनिराज श्री जयतविजय	: ५४३
१२ छुतप्रायः जैनग्रन्थों की सूचि	: श्रीयुत अगस्त्यनन्दजी नाहटा	: ५४७
भमाचारः २ :		
		पृष्ठ ५५० ती सामेने

सूचना—परम पूज्य आचार्य भद्राराज श्री सागरानन्दसूरजी भद्राराजनो “द्विग्यारेनी उत्पत्ति” शीर्षक चालु लेख, तथा परम पूज्य आचार्य भद्राराज श्री विजयलक्ष्मसूरजी भद्राराजनो “प्रभु श्री भद्रारीरनुं तत्त्वज्ञान” शीर्षक चालु लेख आ अंकमां आपी शकाया नथी।

: विज्ञाप्त :	: वार्षिक लक्षाज्ञमः	: ज्ञेयत्वं छे
जे पूज्य मुनिराजने “श्री जैन सत्य प्रकाश” भोक्तव्यमां आवे छे, तथाए भोताना विहाराद्वितीया अरविं अल्लातुं अरनामुं दरेक भिन्नाती सुदी त्रीज पहेलां अभने लभी ज्ञानवा ढूपा कुर्वा, नेथा मासिक गेयवद्ये न ज्ञान, वर्षतभर भणी शके.	स्थानिः १-८-० विजयलक्ष्मसूरजी भद्रारगामनुः २-०-० ७१२५ अ५ ०-३-०	श्री ‘जैन सत्य प्रकाश’ ना प्रथम वर्षना २, ३, ७, ८, अंडेनी ८३२ छे, लेया ते भोक्तव्ये तेनो आमार स्वीकार कर्दाने भद्रारामां तेक्वा अंडे भजे आपवामां आवशे।

मुद्रक अने प्रकाशकः चीमनदाल गोडाळास शाहौ, भालू मुद्रणालय,
धागुपुर, भञ्जुरीनी पोण, अमरावाद.

प्रकाशन स्थानः श्री जैनधर्म सत्यप्रकाशक समिति कार्यालय,
जैशंगभाईनी वारी, धीकांदा, अमरावाद.

ग्रामो त्यु णं भगवओ महावीरस्स

सिरि रायनयरमज्जे संमीलिय सव्वसाहुसंमझ्यं । पञ्च मासियमेयं भव्वाणं मग्गयं विसयं ॥१॥

ॐ श्री जैन सत्य प्रकाश ॐ

अणाणगहदोसगथमह्णा कुञ्बति जे धम्मिए,
अक्खेवे खलु तेसिमागमगयं ढाउं विसिद्धुतं ॥
मोउं तिथ्थयरागमथविसए चे भेडहिलासा तया,
वाइज्ञा प्पवरं पसिद्धजह्णं सच्चप्पयासं मुया ॥ २ ॥

पुस्तक २

अंक १०

पिंडम संवत् १६६३ :
बैशाख शुक्ला पूर्णमी

वीर संवत् २४१३
शनिवार

: सन १६३७
मे १५

श्री सरस्वती विंशिका

कर्ता—आचार्य महाराज श्रीमद् विजयपद्मसूरिजी

(आर्यवृत्तम्)

सिरिकेसरियाणाहं, थुणिअ गुरुं पुज्जणेमिमूर्शिवरं ॥
सज्जायमोयदक्खं, पणेमि सिरिसारयाथुतं ॥ १ ॥
जिणवइवयणणिवासा, दुरियविणासा तिलोयकयथवणा ॥
सुगुणरयणमंजूसा, देउ मईं सारया विडलं ॥ २ ॥
सिरिगोयमपयभत्ता, पवयणभत्तंगिभव्वणिवहस्स ॥
विघुडुवणसीला, देउ मईं सारया विडलं ॥ ३ ॥
मुक्कज्जयणुस्साहा, हयासया देवि ! तं विहाणेण ॥
सरिज्ण पीङ्गभावा, कुण्ठति पढणं महुस्साहा ॥ ४ ॥
दिव्वाहरणविहूसा, पसण्णवयणा विसुद्दसम्भत्ता ॥
सुयसंयसंतिकरणा, देउ मईं सारया विसयं ॥ ५ ॥

जीए झाणं विमलं, थिरचित्तेण कुण्ठति सूर्खिरा ॥
 पत्थाणसरणकाले, वरया सा सारया होउ ॥ ६ ॥
 सिरिमायावीथकवर-मयरूविस्सरियदाणसुहलक्षे ॥
 जगमाइ ! धण्णमण्णया, सइ प्पहाए सरंति मुया ॥ ७ ॥
 वय वय मह हियजणणि ! मियकवरेहि मए किंच किचा ॥
 सकेमि कव्वरयेण, काउं जेण प्पकालंमि ॥ ८ ॥
 कुण साहज्जमणुदिणं, सुयसायरपारपत्तिकज्जंमि ॥
 ण विणा दिणयरकिरणे, कमलवियासो कया हुज्जा ॥ ९ ॥
 तुज्ज नमो तुज्ज णमो, तुम प्पसाएण चउविहो संघो ॥
 सुयणाणज्जणसीलो, परबोहणपञ्चलो होइ ॥ १० ॥
 जेगेऽवि गंथयारा, गंथाईए णवेअ तुह चरणे ॥
 साहंति सज्जसिद्धी, अणगलो ते प्पहावोऽन्त ॥ ११ ॥
 गीयरइतियसवइणो, वंतरसामिस्स पट्टराणीए ॥
 देवी सरस्सईए, चिइयाइ अणेगणामाइ ॥ १२ ॥
 सुयदेवि पहुसमया, हिट्टाइग मेव भारइ भासं ॥
 णिञ्चं सरस्सइं तह, थुण्ठंतु मुहु सारयं वाणीं ॥ १३ ॥
 भत्तीइ पयाण तुहं, हंसोऽवि जए सुओ विवेइत्ति ॥
 तेसि किं पुण जेसि, तुम चरणा सुमरिआ हियए ॥ १४ ॥
 वामेयरपाणीहिं, धरइ वरपोम्पुत्थियं समयं ॥
 इयरेहि तह वीण, कवमालियं सेयवासहरि ॥ १५ ॥
 वयइं णियमुहकमला, एयकवरमालियं पणवपूयं ॥
 संसुद्धंभवइया, किरियाफलजोगवंचणया ॥ १६ ॥
 वाएसरि विणेया, मण्णया झाअंति मंतवणेहि ॥
 जे ते पराजिणेते, बिहफइं विमलधिसणाए ॥ १७ ॥
 तव गुणसईअ जणणि ! जायइ भव्वाण कयनिसण्णाए ॥
 आणंद्रुद्धिवुढ्ही, कल्लाणं रम्मरिद्धिजसं ॥ १८ ॥

(अपूर्ण)

समीक्षाभ्रमाविष्करण

[याने दिग्म्बरमतानुयायी अजितकुमार शास्त्रीए “ श्वेताम्बरमतसमीक्षा ”मां आलेखेल प्रश्ननो प्रत्युत्तर]

लेखक—आचार्य महाराज श्रीमद् विजयलालवण्यसूरिजी

(गतांकथी चालु)

साधु आहारपान कितने वार करे ?

आगळ चालतां लेखक जणावे छे के —

“ मुनिसंघ में सब से अधिक बडे और ज्ञानधारी होने के कारण ही क्या आचार्य उपाध्याय दो वार आहार करें ? क्या महावतधारियों में भी महत्वशाली पुरुष को अनेक वार आहार करने सरीखी सदोष छूट है ? ”

आ लखाणमांथी नीचीने बाबतो तरी आवे छे.

१. आचार्य तथा उपाध्याय वे वार आहार लई शके छे तेमां शुं तेओ पदवीमां मोटा छे अने ज्ञानादिक गुणाथी अधिक छे ते कारण ?

२. वे वार आहार करवो ते सदोष वस्तु छे ।

३. महावतधारीमां महत्वशाली पुरुषने अनेक वार आहार करवानी छूट शास्त्र आपी शके ? अर्थात्—आपे छे ते अनुचित छे ।

प्रथमना जवाबमां जणाववानुं जे— वे वार आहारने उचित व्यक्तिओनां नामो जे कल्पमूत्रना पाठने अवलम्बीने लेखक जणावे छे तेमां नीचे प्रमाणे नामो छे—

१ आचार्य, २ उपाध्याय, ३ तपस्त्री, ४ म्लान, ५ वेगावचकरनार, ६ क्षुल्लक, अने ७ क्षुल्लिका, छतां पण बोजां नामोने अन्धारामां राखीने आचार्य तथा उपाध्यायनां ज नाम आपी आ वे मोटा अने ज्ञानधारी छे माटे वे वार खावानी छूट अपाणी हशे ? आवी हास्य कीडार्थी लेखके पोतानी मनोभावनाने खंवखर प्रदर्शित करी छे । वे वार आहारमां कांई आचार्य अने उपाध्यायनां ज नाम नशी आपेलां, के जेने अंगे लेखकने लखवानो प्रसंग रहे ।

श्वेताम्बर दर्शनमां तथा दिग्म्बर मतमां जे कारणे एक वार आहारनी छूट मनाय छे, ते कारण ज्यां एक वार आहारथी न सचवाई शक्तुं होय त्यां ते कारणने अनुलक्षीने अनेक आहार छे । आ अनुगमने लेखके जो ध्यानमां राखेल हीत तो आ लखवानी जरूरत रहेत नहि, अस्तु । धर्मना साधनभूत शरीरथी अग्लान भावे ते ते धर्म साधी शकाय तेटला माटे एक वार अथवा अनेक वार आहार छे ।

न हि प्रयोजनमन्तरेण मन्दोऽपि प्रवर्तते किंपुनः सूत्रकृतो भगवन्तः ।

प्रयोजन सिवाय मन्द माणस पण प्रवृत्ति नथी करतो तो सूत्रकार भगवान् तो करेज शानी । अर्थात् तेमनी प्रवृत्ति तो जरूर प्रयोजन चाली ज होय, माटे उपर्युक्त व्यक्तिने बे वार आहार जणावाचामां शुं प्रयोजन समायेल छे तेनो आपणे विचार करीए—

प्रथग आचार्य भगवान् के जेओ शासनना राजा छे, जेमना पर शासनसमाज्यनी धुरा निर्भर छे, तेओश्रीने इतरदर्शनना आक्रमणश्री जैनेन्द्रशासनने अबाधित गखी विश्वव्यापी बनाववुं, राजादि विद्वान् वर्गने जैनधर्मनां अमोलां सुभाषितो समजावी तेमने वीतराग शासन प्रत्ये प्रेमाळु बनाववा, संत्री धार्मिक परिस्थिति जालववी, मुनिगणने वांचना आपवी, सारणा वारणादि करवां वर्गेर वर्गेर अनेक प्रकारनो शारीरिक अने मानसिक बोजो होय छे । आ बोजाने अंगे तेओश्रीना शरीरने वधोरे घसारो पहांचवानो सम्भव छे, अने तेमना शरीर पर धार्मिक जनता अने धार्मिक कार्यनो आधार छे । हवे एक वार ज आहार करवाथी आ शरीर ग्लानि पामतुं होय तो बे वार पण आहार करीने शासनधुरा अग्लान भावे वहन करे, आटला माटे बे वार आहारनो जरूरतमां तेओश्रीनुं नाम आपेल छे । आमां पण कोई विशिष्ट संघयणवाळा होय अथवा विशेष बोजो न होय अने एकवारना आहारथी निर्वाह चलावी शकता होय तो एक वार वापरीने पण चलावी ले, पण आचार्यने बे वार वापरवुं ज जोईए एम काई शास्त्रकार भगवान् फरमावता नथी ।

बीजा उपाध्यायजी महाराज के जेओ शासनसमाट् आचार्यना युवगज स्थानापन छे, भावि आचार्य पदने योग्य छे, जेओ आचार्य स्थाननी तालीम ल्लई रद्दा छे, तेओने पण मुनि समुदायने सूत्रो भणाववां वर्गेर अनेक कार्यनो बोजो होय छे, जेने अंगे तेमनुं पण आचार्यनी जेम बे वारमां नाम आपवामां आवेल छे । आमां पण एकवारथी जो निर्वाह थतो होय तो एकवारथी पण चलावी ले ।

बीजा तपस्वी के जेओने विशेष तपस्थाने अंगे जठराग्नि मन्द थाय ते स्वाभाविक छे, अने मन्द जठराग्निमां एकी साथे वापरेलो आहार कदाच विकृत थड्ने ताव, शाढा, उलटी के वातप्रकोप वर्गेरेने करे, जेशी एकी साथे नहि वापरता प्रथम थोडुं वापरी जठराने प्रगतिमां लावीने पठीथी वापरे । आवां कारणोने अंगे तपस्वीनुं पण बे वारमां नाम आपेल छे, आमां पण कोई एक वारथी निर्वाह चलावी शकता होय तो एक वार पण वापरे ।

चोथा ग्लान के जेओ रोगथी प्रस्त छे, अने रोगी अवस्थामां जठराग्नि मन्द होय ए स्वाभाविक छे । आ मन्द जठराग्निमां सर्वथा आहारनो त्याग कराय तो ते विशेष मन्द थाय अने शरीर विशेष क्षीण थई जवाथी धर्मध्यान साचववुं मुक्तेल थई पडे, कदाच एक ज वार थोडो आहार लेवाय तो आखो दिवस ते चाली शके नहि, अने क्षुधाथी

पीडित थाय । कदाच एकी वखते ज बघो आहार लेवाय तो ते विकृत श्रद्धने अनेक जातना दोषो पैदा करे, अने बेवार लबु भोजन करवामां आवे तो उपर्युक्त दोष नहि थता मुण पैदा थाय, आवा मुदाशी ग्लानने बे वारमां गणान्या ह्ले । आमां पण कोई एकवार आहारथी उपर्युक्त दोषनो परिहार करी शके तो एकवार वापरीने पण चलावी ले ।

पांचमा वेयावच्च करनार के जेने आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी अने ग्लान वर्गेनी वेयावच्च करवानी होय ह्ले । जेने अंगे शारीरिक परिश्रम विशेष पडे ते स्वाभाविक ह्ले । अने विशेष शारीरिक परिश्रमवाळाने स्वावेल आहार जलडी पची जाय अने पाढी क्षुया आवीने उपस्थित थाय ए पण अनुभवसिद्ध ह्ले । आ क्षुयानो निवृत्तिने अर्थे बीजी वार आहार लईने पण क्षुधावेदनीयनी शान्ति करीने वेयावच्चने साधे, आवा मुदाशी वेयावच्च करनारनुं नाम बे वारमां आपवारमां आवेल ह्ले । आमां पण कोई विशिष्ट संघणण वाला होय अने एकवारथी चलावी शकता होय तो एकवारथी पण चलावी ले, अन्यथा बे वार पण आहार ले । आ बावतमां जुओ टीकाकार महाराजनां वचनो —

“ ते तु एकवारं भुक्तेन वैयावृत्त्यं कर्तुं न शक्नुवन्ति तदा द्विरपि भुज्ञते ”

भावार्थ—वेयावच्च करनारा एकवार साधेला आहारथी वेयावच्च करवा समर्थ न थई शकता होय तो बे वार पण आहार वापेर ।

छठा क्षुलुक अने सातमी क्षुलिका अर्थात्-बाल साधु अने बाल साध्वी । जेम जेम शरीरना बांधानी विशेष मजबुतता तेम तेम आहारना कालनुं विशेष अन्तर, अने जेम जेम शरीरनी शिथिलता तेम तेम आहारना कालनुं अल्प अन्तर होय ह्ले । आ नियमे वैक्रिय शरीरने पण छोडवां नथी । वैक्रिय शरीरधारी देवगणमां सौथीं वधोर मजबुताईवालुं शरीर अनुत्तरवासी देवोने होय ह्ले, के जेने तेत्रीश सागरोपम जेवा लांबा काल सुधी एक ज स्थितिए शरीर राखवा छतां पण लेशमात्र परिश्रम लागतो नथी । आ अनुत्तर देवोने नीचेना देवो करता आहारना (लोमाहारना) कालनुं विशेष अन्तर होय ह्ले, अने नीचे नीचेना देवोने तेना करतां अल्प अन्तर होय ह्ले, अर्थात् वेळो वेळो आहार लेवो पडे ह्ले । आवी रीते प्रथम आराना युगलियाने शरीरनुं विशिष्ट बन्धारण होवाशी त्रण त्रण दिवसने आंतरे आहार लेवानो होय ह्ले, अने बीजा आराना युगलियाने तेना करतां कोई मजबुताईवालुं शरीर होय ह्ले तेथी बच्चे दिवसने आंतरे आहार लेवानो होय ह्ले । आवी रीते क्रष्णमदेव भगवानना समयमां तपस्याने अंगे १२ मासानुं आहारनुं अन्तर त्योरे बावीश जिनना साधुने ८ मासानुं अने महावीर प्रभुना तीर्थमां ६ मासानुं होय ह्ले, कारण के अवसर्पिणी कालना अनुभावने लईने शारीरिक बांधो हीन थतो जाय ह्ले । प्रस्तुतमां बाल साधु साध्वी के जेना शरीर बगीचाना उगता कोमळ छोडवा जेवां ह्ले, जेने स्वयोग्य

शरीरना बंधारणमां पण घर्णा अधुराश छे, जेने अंगे बन्धारणनो विशिष्टता जणावनर दाढीना, मूळना, काखना के वस्तिना रुंवाटां पण आव्यां होतां नथी। जेम वगीचाना कोमळ छोडवा वर्षाद मात्रना पाणीथी नभी शकता नथी परन्तु अवारनवार वीजा पाणीनी अपेक्षा राखे छे तेम आ शुब्लक अने क्षुलिका एकवारना आहारथी नभी शकतां नथी एटला माटे वे वारमां तेमनां नामा आप्यां छे, आमां पण कोई विशिष्ट शरीरने अंगे एक वारथी नभावी शके तो एक वारथी पण चलावो ले।

(अपूर्ण)

श्री शंखेश्वरपार्वनाथ-स्तोत्रम्

कर्ता—मुनिराज श्री वाचस्पतिविजयजी

[पञ्चचामरवृत्तम्]

सरोजलीननीलिमप्रभाप्रभावुकाम्बुद-च्छटाकटालैवैद्युतप्रकाशनीलकङ्कणम् ॥
 सुवर्णकर्णिकाम्बुजच्छटाविसारिकवृं, स्तवीमि पार्वनाथमुच्चमुक्तिसद्गदायकम् ॥ १ ॥
 सहस्रवत्सरायितं व्यशीतिवर्षपूर्वकं, सुनागराजयुग्मैसुरालये च पूजितम् ॥
 कलङ्कमुक्तचन्द्रवन्यमूखमस्ति निर्मलं, स्तवीमि पार्वनाथमुच्चमुक्तिसद्गदायकम् ॥ २ ॥
 अगत्यमेघवाहनालिकोत्करेण चुम्बितं, अशेषशेषमस्तकावतसपीठलालितम् ॥
 मुरासुरेशसेवितं भवच्छिदाग्रिपङ्कजं, स्तवीमि पार्वनाथमुच्चमुक्तिसद्गदायकम् ॥ ३ ॥
 स्मृतीन्दुचन्द्रिकायितं क्षणेऽपि सिद्धिदायिनं, भवार्णवे पतत्प्रजासुतारणे हि नौसमम् ॥
 सदेह यस्य समके भुवां क्रमाम्बुजद्वयं, स्तवीमि पार्वनाथमुच्चमुक्तिसद्गदायकम् ॥ ४ ॥
 पुरा जरां निवारितुं मुरारिराजवन्दितं, यशः शिशुक्षपाकरोव वृद्धिमाव्यतां गतम् ॥
 मुशंखतीर्थपत्नने प्रभावुकेऽधुनोषितं, स्तवीमि पार्वनाथमुच्चमुक्तिसद्गदायकम् ॥ ५ ॥
 वृशंससंशयावलीतमोभिदावभास्करं, मुवर्णरत्नकुट्ठिमप्रभोत्करेणभासितम् ॥
 विसारिसारिपर्षदि प्रकृष्टवोधिरत्नदं, स्तवीमि पार्वनाथमुच्चमुक्तिसद्गदायकम् ॥ ६ ॥
 पयोऽविद्यवारिनैष्टिकप्रकम्बुकण्ठनिर्गतै—रनेकतीर्थपूतकैर्महाभिषेचनो विधिः ॥
 मुवर्णशैलशेखरेऽमरेश्वर्भृदाकृतः, स्तवीमि पार्वनाथमुच्चमुक्तिसद्गदायकम् ॥ ७ ॥
 जटाकटाविनिर्गता पवित्रिताऽपि जाह्वी, सदा सुमेवलागता विभाति भाति विस्तृता॥
 वराणसी तदेशिताखसेनराजनन्दनं, स्तवीमि पार्वनाथमुच्चमुक्तिसद्गदायकम् ॥ ८ ॥

॥ प्रशस्ति ॥ (पृथ्वी छन्दः)

सदा सरसि मानसे सुरगणोऽपि यं सेवते, पिवन्ति वचनामृतं सुमतिमाश्रयन्ते परे ॥
 सलोकमुरसेविते मुनिप्रचारिशंखेश्वरे, व्यरीरचदमुं मुंदा जनहिताय वाचस्पति ॥ १ ॥
 ॥ श्री शंखेश्वरपार्वनाथ-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

दिग्म्बर शास्त्र कैसे बने ?

लेखक—मुनिराज श्री दर्शनविजयजी

(गतांक से क्रमशः)

प्रकरण ११—आ० श्री मानतुंगसूरि

भगवान् महावीरस्वामी की शिष्य परंपरा में १६ आ० श्री सामन्तभद्रसूरिजो के पश्चात् क्रमशः १७—वीर निं० सं० ५९५ में कोरन्टा में प्रतिष्ठाकारक आ० श्री० वृद्धदेवसूरि, १८—आ० श्री प्रद्योतनसूरि, १९—आ० श्री मानदेवसूरि और २०—आ० श्री मानतुंगसूरि पट्ठधर हुए ।

आ० श्री मानतुंगसूरि गणधर सुधर्मस्वामी से २० वें और बनवासी गच्छ के चौथे आचार्य थे । महाकवि बाण और मयूर आपके समकालीन पंडित थे । जब आपने भक्तामर स्तोत्र बनाकर राजा को प्रतिबोध किया तब उनकी विद्या के चमत्कार से गजा उन्हें अधिक मानने लगा, आपने नमिऊण नामक महाभयहर स्तोत्र बनाकर नागराज को भी अपने वश किया था । इनके अलावा भक्तिभर इत्यादि अनेक स्तोत्र आपने बनाये हैं ।

इन सब स्तोत्रों को पढ़कर कोई भी विद्वान् आपके श्वेतांबर होने का दावा कर सकता है । इसके लिए लोकप्रसिद्ध भक्तामर स्तोत्र के कतिपय काव्य देखिए—

काव्य २५ में और और देवों के नाम से तीर्थकर भगवान् की तारीफ की है । इसमें बाद्य औपचारिक उपमा है । दिग्म्बर सम्प्रदाय में बाद्य उपचार इष्ट नहीं है । काव्य २१ में तीर्थकर भगवान् को सिंहासन में रहे हुए बताये हैं (कल्याणमन्दिर स्तोत्र काव्य २३ में भी यही निर्देष है) । दिग्म्बर समाज भगवान् को सिंहासन से भिन्न उपर रहे हुए मानता है, जब इस काव्य में प्रभु और सिंहासन का सम्बन्ध बताया गया है । काव्य २८, २९, ३०, ३१ में प्रभु की देवकृत विभूतियाँ—अशोक वृक्ष, सिंहासन, छत्र और चामर का वर्णन है । तीर्थकर की स्तुति में इस निकटवर्ती विभूति का वर्णन इष्ट माना गया है । श्री पार्श्वनाथ भगवान के उपर शेषनाग की फण को जाती है, सो भी अंगत विभूति है । जैसे इन विभूतियों के होने पर भी तीर्थकर वोतराग है, वैसे ही

अभिषेक, पुष्पमाल, आंगीरचना, रक्षागोहण आर करोड़ों रुपये के मन्दिर बौगृह विभूति के होने पर भी वीतराग तो वीतराग ही है*। दिग्म्बर सम्प्रदाय इन वातें से सहमत नहीं है।

इस स्तोत्र में वस्तुतः महिमादर्शक दूरवर्ति विभूति जैसी कि पुष्पवृष्टि, दिव्यव्यनि, भासण्डल और दुन्दुभि का वर्णन किया नहीं है। उस वर्णन का अभाव और निकटवर्ती विभूति के सद्वाव से “अंगपूजा” का पक्ष सप्रमाण हो जाता है। यह दिग्म्बर विद्वानों को खटका और उन्होंने नये ४ काव्य बना कर इस स्तोत्र में जोड़ दिये। असल में भक्तामर स्तोत्र के ४४ काव्य हैं, विक्रम की बारहवीं शताब्दी के भक्तामर-वृत्तिकार ने ४४ काव्य की वृत्ति की है। और आज भी श्रेतांबर समाज ४४ काव्य को प्रमाण मानता है। परन्तु दिग्म्बर समाज ४८ काव्यों को मानता है।

काव्य २९ में प्रभु के भूमि पर चरणस्थापन और देवकृत कमलरचना का वर्णन है। दिग्म्बर समाज योजन प्रमाण उच्च कमलों पर प्रभु का विहार मानता है।

काव्य ३३ में निकटवर्ति विभूतियों की तारीफ है। दिग्म्बर समाज निकटवर्ति विभूति—महिमादर्शक क्रिया—अंग पूजा को वीतराग के दूषणरूप मानता है।

काव्य ३४ में भयभेदकत्व वर्णित किया है। काव्य ४४ में माला धारण करने का निर्देश है। दिग्म्बर समाज इससे भी इतराज करता है।

इन सब काव्यों से आ० मानतुंगमूरि का श्रेतांबर होना सिद्ध होता है।

दिग्म्बर समाज आपके भक्तामर स्तोत्र से मुख्य होकर उसे शास्त्र की श्रेणी में दाखिल करके आपको दिग्म्बर आचार्य मानलेता है। दिग्म्बर आचार्यों ने आपकी जीवनी स्वीकारी है, सिर्फ उसमें से आपके गच्छ, गुरु, शिष्य और दूसरी प्रन्थरचना को उड़ा दिया है। महापुरुष के अच्छे ग्रन्थ को अपनाना वो न्याय है किन्तु उनके ऊपर अपने सम्प्रदाय की महोरछाप लगा देना तो किसी तरह उचित नहीं है।+

मारांश यह है कि—आ० मानतुंगमूरि श्रेतांबर आचार्य हैं, और आपको व आपके भक्तामर स्तोत्र को दिग्म्बर सम्प्रदाय ने स्वीकारा है। (क्रमशः)

* अनीहित्स्तीर्थकृतोऽपि विभूतयः जयन्ति ।

—पूज्यपाद

+ प० धनपाल कवि ने “तिलकमंजरी” बनाई है। प० श्री शोभनसुनिजी ने श्रेतांबरीय चत्यवैदन की चूलिकास्तुतिरूप “चतुर्विंशिका” बनाई है। ये दोनों श्रेतांबर हैं। चतुर्विंशति का दिग्म्बरीय किसी भी धर्म विधि के साथ सम्बन्ध नहीं है, फिर भी “चतुर्विंशति” से आकर्षित होकर दिग्म्बर समाज शोभनसुनिजी को दिग्म्बर ही मानता है।

सर्वमान्य धर्म

परम पृथ्य आचार्य महाराज श्रीमत
सागरानन्दसूरीश्वरजी महाराज का
सर्वधर्म परिषद् में भेजा हुआ वक्तव्य ।

ध्यायामि ज्योतिर्हन् गतनिधनमलं ज्ञानसच्छर्मयुक्तं,
मायामुक्तं प्रकृत्याभिरहितमनयं कर्मदोषैर्विहीनम् ।
शास्त्रोद्यं सर्वधर्मप्रचयमनुगतं विश्वजन्नुद्धरं यत्,
भव्यानां मोक्षमार्गप्रणयनरुचिरं शक्रवृन्दोपसेव्यम् ॥ १ ॥

सज्जन गण ! आप लोगों ने अखिल धर्म का रहस्य श्रवण करने की प्रणालिका का जो आसम्भ किया है वह आर्य देशकी प्रजा के लिए बड़ा ही सौभाग्य सूचक है । जो कुछ मैं इस विषय में कहूँगा वह सर्व धर्म की अनुकूलता का द्व्याल करके कहुँगा । इससे इस निबंध में जैनधर्म का पारिभाषिक और रूढ़ पदार्थों का समावेश न हो उसकी ब्रुटी नहीं गिनेंगे ।

सर्व धर्म का ध्येय—आर्य प्रजा में धर्म के विषय में यद्यपि सेंकड़ों मत-मतांतर हैं, लेकिन हरेक धर्म का रास्ता अलग होने पर भी सर्व धर्म का परम ध्येय अपवर्ग की प्राप्ति ही है । इस वजह से ही यावत् धर्मशास्त्रकारों ने यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः याने जिससे स्वर्गादि सुख और मोक्ष हो उसको धर्म माना है । अभ्युदय धर्म का अनन्तर फल है और निःश्रेयश याने मोक्ष की प्राप्ति होना यह सर्व धर्म के हिसाब से परम्पर फल है । अनाज के वृप्ति में जैसे तृणादि की प्राप्ति अनन्तर फल है; लेकिन धान्य की प्राप्ति ही परम्पर फल है इसी सबब से मोक्ष ही धर्म का प्रकृष्ट फल है । यह बात सर्व आस्तिकों ने मंजूर की हुई है । यद्यपि निःश्रेयस याने मोक्ष मुख्य और ध्येय फल है, लेकिन धर्म से अभ्युदय की प्राप्ति ही पेस्तर होती है । इसीसे निःश्रेयस शब्द पेस्तर नहि धरके अभ्युदय पद धरा गया है ।

मोक्ष का रास्ता—सर्व आस्तिक धर्मशास्त्रकारों ने मोक्ष को ही धर्म का परम फल माना है, तो धर्म एक ऐसी ही वस्तु होनी चाहिए कि जो फौरन या देर से भी मोक्ष को प्राप्त करनेवाली हो । याने धर्म का आचरण करनेवाले को उसी जन्म में मोक्ष की प्राप्ति करादे या भवांतर में ही मोक्ष की प्राप्ति करादे ऐसा ही धर्म मोक्ष का साधन बन सकता है । यद्यपि मोक्ष के स्वरूप में मतमतांतरों की संख्या कम नहीं है तथापि सच्चा मोक्ष का रास्ता मिलजानेपर सच्चा मोक्ष आपेआप ही मिल जाता है । इसी

वजह से बहुत से आर्य धर्म के शास्त्रकारों ने मोक्षपदार्थ का आदि में स्फोट न करके मोक्ष के कारणभूत धर्म का ही स्थान स्थान पर स्फोट किया है। जैसे जैनशास्त्रकार भगवान् उमास्वाति वाचकजी ने तत्त्वार्थसूत्र के आरम्भ में ही सम्प्रगदर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गः ऐसा सूत्र बना के सच्ची मान्यता, सच्चा बोध और मुन्द्र वर्तन रूप मोक्ष का रास्ता ही दिखाया। न तो उस मोक्ष का स्वरूप दिखाया न मोक्ष की समृद्धता ही दिखाई। यावत् मोक्ष की परम व्येयता भी दिखाई नहीं। जगत् में भी अपन देख सकते हैं कि नगर के रास्ते पर चलनेवाला इन्सान उस नगर का सच्चा स्वरूप भी नहीं पहिचानता हो या उलटा ही पहिचानता हो; तब भी वह सच्चे नगर को पाता ही है। इसी तरह से मोक्ष का जो रास्ता है, उसपर चलनेवाला आदमी मोक्ष को पूरी तौर से पहिचाने या नहीं भी पहिचाने तब भी वह अवश्य मोक्ष को पाता है। इसी बात को इधर भी ख्याल रख के मोक्ष के स्वरूप में जो मतमतांतर हैं उनका कुछ भी विवेचन करने में नहीं आयगा।

क्या स्वर्ग और मोक्ष धर्म का लक्ष्यार्थ नहीं हैं? —कितनेक साक्षरण, आस्तिक शास्त्रों में धर्म के फलरूप से फरमाये हुए स्वर्ग को तथा मोक्ष को सिर्फ वाच्यार्थ में ही ले जाते हैं, और सांसारिक इहभविक सुखों की सिद्धि को ही धर्म के लक्ष्यार्थ में लेते हैं; याने हिंसा, झट, चोरी, खींगमन, परिग्रह, गुस्सा, अभिमान, प्रपञ्च और लोभ को छोड़ने से शास्त्रकारों ने जो स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति दिखाई है, वह सिर्फ वाच्यार्थ याने शब्दों का ही अर्थ है; ऐसा मानते हैं। याने आखिर में न कोई स्वर्ग जैसी चीज है, न कोई मोक्ष जैसी चीज है, लेकिन स्वर्ग और मोक्ष शब्द आगे धरने से हिंसादिक का करना रुक जाय तो जगत में बलवान् इन्सान दुर्बल को सताने से दूर रहे, झूठ नहीं बोलके सत्य ही बोलनेवाला होने से प्रामाणिक बन जाय, किसी की कोई भी चोज बिना हक लेने की चाहना न करे, शरीर की रक्षा अच्छी तरह से करे, संप्रहशील न बनके प्राप्त हुई लक्ष्मी का व्यय दुःखी जीवों के उद्धार के लिए करे और क्रोधादिक विकारों के अधीन बन के निर्विचार दशा या दुर्विचार दशा में न जा पडे। यह धर्म शास्त्रकारों का मतलब है। और जिससे इहभविक किसी भी आपत्ति को वह न पाये, इतना ही नहीं लेकिन अपने कुटुम्ब और सारे संसार को, वह हिंसादिक को नहीं करनेवाला आदमी, इस तरह से परम सुखमय कर सके इसी लक्ष्यार्थ से शास्त्रकारों ने स्वर्ग मोक्ष के कारण के नाम से धर्म दिखाया है। ऐसा यह सब कथन जो इन्सान पुनर्जन्म या भवांतरा नहीं माननेवाला है वैसे के ही मुख में शोभा दे सकता है। परन्तु जो इन्सान अपने को हिन्दु जाति में ही दाखल करना चाहता हो वह स्वर्ग—मोक्ष को वाच्यार्थ

और लक्ष्यार्थ दोनों तरह से मानने में कभी नहीं हिचकायगा। हिन्दुजाति को मतलब ही यही है कि आत्मा को एक भव से दूसरे भव, दूसरे भव से तीसरे भव, इस तरह से घुमनेवाला ही माने। हिन्दू धारु घुमने के अर्थ में है, और घुमनेवाला ही यह आत्मा होने से शास्त्रकारोंने आत्मा को हिन्दु माना है और इस तरह से हिन्दु आत्मा को माननेवाले ही हिन्दु गिने गये हैं। स्थाल रखने की जरूरत है कि जिस मजहब के नेता ने एक ही पुनर्जन्म मान के बार बार पुनर्जन्म रूप भवान्तर नहीं माना उन लोगों ने ही हिन्दु जाति को काफर शब्द से पुकारा है। इस स्थान में सर्व धर्म का विचार होने से विशेष विचार न करके 'वास्तविक रीति से स्वर्ग—मोक्ष को देनेवाला धर्म है', यह बात हिन्दु जाति को सभी तरह से मान्य है, ऐसा समज के धर्म के ही विषय में कुछ कहने में आयगा।

सभी हिन्दुशास्त्र इस विषय में एक मत को धारण करते हैं कि धर्म का नतीजा स्वर्ग और मोक्ष ही है। याने कोई भी हिन्दु स्वर्ग या मोक्ष को असत् पदार्थ नहीं मानता है कि जिससे स्वर्ग और मोक्ष को सिर्फ वाच्यार्थ में रखके इहलौकिक फल को लक्ष्यार्थ की तौर से गिनले। सामान्य शास्त्रीय नियम भी आप लोगों के स्थाल में है कि वाच्यार्थ का बाध होने से ही वाच्यार्थ को छोड़ के उससे भिन्न ही लक्ष्यार्थ लेना। यहां तो स्वर्ग और मोक्ष ये दोनों पदार्थ अनुमान और शास्त्र से सिद्ध हैं, इससे इधर किसी तरह से वाच्यार्थ का बाध नहीं है। ऐसा यथास्थित स्वर्ग और मोक्ष का कारण धर्म ही हो सकता है। सिवाय धर्म के यदि स्वर्ग और मोक्ष हो जाता हो तो इस जगत में बनस्पति आदि पकेन्द्रिय वर्गह जीवों का अधम जाति में ठहरना और रुलना होता ही नहीं। जैसे अल्प ही संख्या के आदमी पुण्य का कार्य करनेवाले और पुण्य की धारणा रखनेवाले होते हैं, वैसे ही जगत में धन, धान्य, कुटुम्ब, शरीर आदि सब तरह का आनन्दपानेवाले लोक भी अच्युत होते हैं। इसी नियम से समझ सकते हैं कि धर्म और पुण्य का फल ही समृद्धि और आनन्द है। और मनुष्य—जन्म में जो कुछ ज्यादा धर्म और पुण्य किया जाय उसके फलरूप आनन्द और समृद्धि भुगतने का स्थान स्वर्ग जरूर ही हेतुवाले को मानना ही होगा। पर्यन्त में जैसे शान्त आदमी प्रसन्नता से दुनिया के बाह्य पदार्थ का संयोग नहीं होने पर भी असीम आनन्द को भुगतता है उसी तरह से सर्व अदृष्ट या कर्म से रहित हुआ स्व स्वरूप में अवस्थित हुआ आत्मा भी निर्वचनीय आनन्द का अनुभव करे उसमें कुछ भी ताजुबी नहीं है। और वैसी दशा को ही शास्त्रकारों ने मोक्ष मनाया है। उससे मोक्ष का असम्भव मानना शास्त्रानुसारियों और युक्ति के अनुसारियों के लिए कभी लाजिम नहीं है।

धर्म का स्वरूप—उपर दिखाया हुआ धर्म स्वर्ग और मोक्ष का कारण है यह बात सभी आस्तिक लोक मंजूर करते हैं। लेकिन धर्म किसको कहना इसमें ही बड़ा विवाद है। कितनेक भद्रिक लोक तो धर्म का अलग रास्ता सुनके ही धर्म के उन भेदों के नाम से ही धर्म से अलग हो जाते हैं; लेकिन उन लोगों को सोचना चाहिए कि रजत, सुवर्ण, हीरा, मणि, मोती, पत्ता, वैराग्य जगतभर की जो जो किमती चीजें गिनी जाती हैं वे सभी परीक्षा की दरकार रखती हैं, क्योंकि बिना परीक्षा किए कोई भी इन्सान इन चीजों को नहीं ले सकता। तब धर्म जैसी चीज जो इस जिन्दगी को सुखमय बनाने के साथ आयन्दा जिन्दगी की मनोहरता करने के साथ शाश्वत ज्ञान और आनन्दमय ऐसे अव्याबाध पद को देनेवाली होने से अनमोल है वह परिश्रम और परीक्षा किए बिना कैसे सच्ची तरह से पहिचान सकते और पा सकते हैं। सुन्न महाशय को इस बात पर गौर करने की जरूरत है कि जगत में जिस चीज से जो चीज मिल जाती है उस चीज से वह चीज कम किमतवाली ही होती है। इसी तरह खान, पान, शरीर, इन्द्रियाँ, वाचा, विचार, कुटुम्ब, धन, धान्य, वैराग्य सभी चीजें धर्म याने पुण्य से ही मिलती हैं। इससे स्पष्ट ही कहना चाहिए कि धर्म यह अणमोल चीज है। इस वास्ते उसकी परीक्षा अवश्य होनी ही चाहिए। स्थाल करने की जरूरत है कि तरकारी लेने में गडवड हो जाय तो आधे आने की तुकसानी होवे, कपड़ा खरीदने में अकल का उपयोग नहीं करे तो दो चार आने का हरजा हो, चांदी के गहने में दो चार रुपयों का हरजा होवे, सोने के गहने में पचास पचास का हरजा होवे, हीरा मोती के खरीदने में हजार दो हजार का घाटा होवे। लेकिन परीक्षा किये बिना धर्म के लेने में तो इस जिन्दगी और आयन्दा जिन्दगी की बरबादी होने के साथ संसारचक्र में जीव का रुलना ही हो जाय। इससे धर्म की खास परीक्षा करने की जरूरत है। परीक्षा करके ही लिया हुआ धर्म बहुत करके सच्चा मिल सकता है।

धर्म की परीक्षा—जगत में जिस पदार्थ को अपन देखते हैं उसकी परीक्षा अपन फौरन कर सकते हैं, क्योंकि जगत के बाद्य पदार्थों की परीक्षा उनके स्पर्श, रस, वर्ण, गंध, संस्थान, आकृति वैराग्य से हो सकती है, लेकिन यह धर्म ऐसी चीज है कि जिसकी परीक्षा स्पर्श वैराग्य से कभी नहीं हो सकती। इससे ही धर्म के विषय में ज्यादा मतमतांतर भी हैं और परीक्षा करना मुश्किल भी है। स्पर्शादिक से जिस वस्तु की परीक्षा हो जाती है उसमें विवाद का स्थान ही नहीं रहता। जैसे मृदु और कर्कश स्पर्श, मीठा और तीखा रस, सुगंध और दुर्गंध, मुरुप और कुरुप वैराग्य में किसी तरह से किसी का

भी विवाद होता ही नहीं; लेकिन धर्म ही ऐसी चीज़ है जो न तो व्यवहार का विषय है और न तो स्पर्शादि से परीक्षा करने के लायक है। इतना होने पर भी धर्म को परीक्षा किसी तरह से नहीं हो सकती है, ऐसा नहीं है। जैसे आत्मा, बुद्धि आदि पदार्थ व्यवहार और स्पर्शादि का विषय नहीं हैं तब भी उन आत्मादिक पदार्थों को अकलमंद आदमी अनुमान से पहिचान सकता है उसी तरह धर्म की परीक्षा भी अकलमंद आदमी दिमाग से कर सकता है।

व्यापक धर्मकी स्थिति:—जगत के सभी अकलमंद आदमियों को इस बात का तो पूरा निश्चय ही है कि किसी को भी सताना, झूठ बोलना, किसी की चीज़ को छीन लेना, औरत पर खराब निगाह करना और सभी तरह से संप्रहशील बनना, ये सब कार्य बुरे माने गये हैं। याने इन सताना आदि कार्यों को रोकने से ही धर्म हो इस बात में कोई भी आदमी उजर नहीं कर सकता। लेकिन समझदार मनुष्य वर्ताव की जितनी कीमत करे उससे ज्यादा कीमत अच्छे विचार की करते हैं। इसीसे ही महर्षि फरमाते हैं कि हरेक धार्मिक आदमी को चाहिए कि अपने वर्तन को सुधारने के साथ साथ विचारशीलता को भी उन्नत बनावे। सामान्य रूप से सभी मनुष्य उन्नत विचार की ही चाहना करते हैं, लेकिन कितनेक मनुष्यों को उन्नत विचार किसको कहना उसका भी ख्याल नहीं होता है। और कितनेक आदमी ख्याल होने परमी उन्नत विचार का परिशीलन करने में ही मंद रहते हैं। लेकिन यह बात निश्चित है कि जिस आदमी को उन्नत विचार का ख्याल होगा वही उन्नत विचार का परिशीलन कर सकेगा। इससे धर्म का असली स्वरूप जो विचार का औन्नत्य है उस पर गौर करने की जरूरत है।

विचार औन्नत्य के भेदः—आदमी को धर्म में प्रवृत्त होने के साथ विचार का औन्नत्य आवश्यक है यह बात सभी दर्शनवाले को मंजूर करना ही होगा। किसी दर्शनवाले ने यह नहीं कहा है कि विचार की अधमता के साथ धर्म के अनुष्टुत धर्म-रूप में गिने जाय। चाहे तो किसी को दान दें, सद्वर्तन रखें, अनेक तरह की तपस्या करके कष्ट उठावें, या संसार की माया से दूर होने का चित्त करें। लेकिन जब तक विचार का औन्नत्य न हो तब तक उन दानादिक को कोई भी दर्शनवाला धर्म नहीं मान सकता है। यह बात भी ख्याल करने के योग्य है कि जैसे दानादिक की प्रवृत्ति करने पर भी विचार का औन्नत्य नहीं होवे तब सच्चा धर्म नहीं हो सकता है, उसी तरह से विचार का औन्नत्य होने पर अवश्य दानादिक की प्रवृत्ति न भी हो, तब

भी विचार औन्नत्य को धारण करनेवाला अवश्य ही धर्मवाला होता है । यदि ऐसा नहीं मानने में आवे तो एक भी दफे आदमी निर्धन हो गया तो उस जन्म में या अन्य जन्म में उसको दानादि धर्म होने का सम्भव ही नहीं है । ऐसा मानने से नतीजा यह आ गया कि निर्धन को दानादि नहीं होने से (सर्वथा) स्वतः धर्म नहीं होगा, और धनवान के धन का दुरुपयोग और अनुपयोग ज्यादा होने से धर्म का सम्भव बहुत कम होगा । इससे आहिस्ते आहिस्ते धर्म का अभाव ही हो जायगा । इन बातों का विचार करने से सज्जनगण सहज ही समझ सकेंगे कि धर्म की असली जड़ विचार का औन्नत्य ही है । इस विचार औन्नत्य को चार भाग में अपन विभक्त कर सकेंगे—

१ जगत् भरके सब जन्तु चाहें तो स्थावर हो चाहे तो चल हें, चाहे तो समझदार हें, चाहे तो बिन समझदार हें, स्वदेशी हें, या विदेशी हें, स्वजन हें या परजन हें, मित्र हें या शत्रु हें, हिंसक हो या दयालु हें, चाहे जैसे हें; लेकिन किसी जन्तु पर वैर विरोध की भावना न होवे याने 'अपराध की माफी लेनी और देनी' इस सिद्धांत को आगे रखके 'मैत्यस्तु तेषु सर्वेषु' याने सभी जीवों को फायदा पहुंचानेवाला होना यह मेरा असली कर्तव्य है, ऐसा विचार कर इस मैत्रीभाव के सिद्धांत से ही जैन शास्त्र धर्म को फरमाता है । उसी से जैनधर्म के सत्ताकाल में किसी जैन राजा या समाज ने किसी अन्य धर्म के मन्दिर, धर्मस्थान या गुरुस्थान को हड्डप करने के लिए न तो उद्यम किया है और न हड्डप किया है । यद्यपि इस मैत्री भावना को संमार की मौज में मचे हुवे आदमी निर्बलता और कायरता के नाम से पुकारते हें, लेकिन सज्जनगण तो स्वयं ही समझ सकते हैं कि जगत में ऐसा एक भी सद्गुण नहीं है कि जिसको दुर्जनों ने दूषित न किया हो; इस बात को सोचके जनसमुदाय को खोटी बहकात्रट से कोई भी सज्जनगण माफी देने के साथ केहस मैत्री गुण को कभी दूर न करेंगे । यह मैत्री भावनावाला ही धर्म विश्वधर्म हो सकता है । जिस धर्म में वैर और विरोधहृप अभ्य जाज्वल्यमान करने का आदेश हो वह धर्म कभी विश्वधर्म होनेके लिये लायक नहीं बन सकता ।

२ जिस तरह सर्व प्राणिओं के हित को चाहना करने की धर्मनिष्ठ प्राणि के लिये जरूरत है, उसी तरह (खुदसे) ज्यादा गुणवान आदमी की ओर बड़ा सक्कार सन्मान करने की इच्छा प्रदीप होना ही चाहिये । जो आदमी गुणवान को पहिजानता नहीं है, और गुणवान का आदरसङ्कार सन्मान करने के लिये हरदम अभिरुचिवाला नहीं रहेता, वह आदमी कभी धर्मनिष्ठ नहीं हो सकता । अनादि काल से अज्ञान से भरे हुए आत्मा को नये नये गुणों की

प्राप्ति करने का एक ही गत्ता है, वह यह है कि गुणवान् महात्मा की याने सत्पुरुषों के सन्मान की ओर हगदम अुकता रहे। कोई भी आदमी गुण और गुणवान का सन्मान किये बिना कभी गुणवान नहीं बन सकता है, और इसी से ही शास्त्रकारों ने संतकी स्तुति की बड़ी ही महिमा दिखाई है। यह विचार औन्नत्य का दूसरा भेद है। ३ जिस तरह अपराध की माफी लेने देने के साथ सर्व जीवों के हित का सोचना और सत्पुरुषों की सेवा के लिये हगदम भावना—युक्त होना कहा है उसी तरह शारीरिक या आत्मिक तकलीफ से हैरान होनेवाले जो कोई भी जन्तु हों उन सबकी तकलीफ मिटाने का विचार होवे, यह विचार औन्नत्य का तीसरा भेद है। स्थाल करने की जरूरत है कि जिस जन्तु ने पाप बांधा है वह तकलीफ पाता है; लेकिन तकलीफ पानेवाले प्राणी की तकलीफ दूर करने से तकलीफ दूर करनेवाले को बड़ा ही लाभ है। जैन शास्त्र के हिसाब से पाप का फल अकेली तकलीफ भुगतने से ही भुगता जाता है ऐसा नहीं है; किन्तु जैसे केले के अजीर्ण में इलाइची या आम के अजीर्ण में सुंग देने से विकार दूर हो जाता है, लेकिन वह केले और आम की वस्तु उड नहीं जाती है, उसी तरह बंधा हुआ पाप का रस टूट जाय और कम हो जाय इससे, उस दुःखी प्राणि का दुःख कम हो जाता है। दवाई देने से जैसे बीमार की तकलीफ मिट जाती है, उसी तरह दयालु महाशयों के प्रयत्न से दुःखी प्राणियों का दुःख भी दूर हो सकता है। इससे दुःखी प्राणियों के दुःख को दूर करने का जो विचार होवे वह विचार-औन्नत्य का तीसरा भेद है।

४ जगत में कितनेक प्राणी ऐसे होते हैं कि जिनके हित के लिए प्रयत्न करें, दुःख दूर करने के लिये कटिवद्व होवें, तब भी उन प्राणियों के कर्म का (पाप का) उदय विचित्र होने से या चित्तवृत्ति अधम होने उनका हित न होवे। इतना ही नहीं लेकिन वह अपने आप अहित में ही या दुःख के कारण में ही मस्त हो जाय। वैसे प्रसंग में किसी तरह से भी उस हित करनेवाले आदमी को उस जन्तु पर द्वेष नहीं करना, लेकिन कर्म और उनके फलों को सोचके उदासीन वृत्ति में रहना यह विचार-औन्नत्य का चौथा भेद है।

उपसंहारः—इन चारों ही तरह से विचार के औन्नत्य को धारण करनेवाला प्राणी धर्मनिष्ठ या धर्मपरायण हो सकता है। इससे हरेक आदमी को दानादि धर्मपरायणता प्रहण करने के साथ इस विचार-औन्नत्य को धारण करना चाहिए। आप सञ्जन गण का ज्यादे वक्त नहीं लेके मेरे वक्तव्य के खत्म करते इतना ही कहूँगा कि सच्चिदानन्द आत्मा को खोजने के लिए कटिवद्व होनेवाले सञ्जनों को उपर्युक्त मार्ग में आना ही चाहिये।

શ્રી સંભવનાથ ભગવાનની કદ્વાણુક ભૂમિ

સહેટ મહેટ

લેખક-મુનિરાજ શ્રી જ્ઞાનવિજયજી મહારાજ

અવધ પ્રાંતમાં, અલરામપુર રાજ્યમાંના ગેંડા અને અહરાયચ જિલ્લાની સીમા પર ત્રીજા તીર્થાકર શ્રી સંભવનાથ ભગવાનનાં ચાર કદ્વાણુકેથી પવિત્ર થયેલી શ્રી આવરતી નગરી આવેલી છે. જ્યાં પ્રલુશ્રી વીર પણુ વિચચર્યા હતા. એ નગરી અત્યારે “સહેટ મહેટ” ના નામથી ઓળખાય છે. લાં એક પ્રાચીન જિનાલય અંડર ઇપે ઉલું છે.

અલારે એ ડેકાણે એ મોટા દીવા (૨૫૨૦) છે. અને બંને વર્ષ્યે એ ઇલ્લાંગનું અંતર છે. અહીં ભાગ અવસ્થામાં પડેલું એક પ્રાચીન મંદિર છે કે શ્રી સંભવનાથજના મંદિર તરફ ઓળખાય છે. અહીં જૈન યાત્રિકા પણુ આવે છે જરા! બૌદ્ધોનું પણ ત્યાં કંઈક સ્થળ છે એટલે બૌદ્ધો પણ યાત્રાએ આવે છે. બૌદ્ધોની એક ધર્મશાળા પણ છે. જૈનને ઉત્તરવાનું કશું સ્થળ નથી, એટલે યાત્રાળું શીરેઝપુર રોકાઈને ત્યાંથી સહેટ મહેટની યાત્રા કરી પાણ ફરે છે. આ સહેટ મહેટ — શ્રાવસ્તી-ના મંદિરની પ્રાચીન જૈન મૂર્તિઓ અલારે શીરેઝપુરના મુજિયમમાં છે.

અત્યારે આ તીર્થ તરફ જૈન સંધનું જરા પણ ધ્યાન નથી. પણ એ તરફ ધ્યાન આપવાની વધું જ અગત્ય છે, જેથી એનું યોગ્ય રક્ષણ થઈ શકે. આશા રાખીએ ડે આપણું સમાજના શ્રીમતો અને આપણું આગેવાન જૈન સંસ્થાઓ એ જરરી વસ્તુ તરફ અવસ્થ લક્ષ આપશે અને ત્યાં જિનમંહિર અને ધર્મશાળા તૈયાર કરવાને એક પ્રાચીન તીર્થનો ઉદ્ઘાર કરાવશે. સાથે સાથે એ પ્રાચીન તીર્થને લગતી શાધ્યોણ પણ કરાવશે.

નોંધઃ—

સંભવનાથ પ્રમાણે આ તીર્થ માટે એ તરફના શ્વેતાંખર લાઈએ તરફથી પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે. અસો શ્વેતાંખર સંધના આગેવાનોને આ માટે યોગ્ય તપાસ કરવા અને અહુ મોકું થાય તે પહેલાં એ તીર્થનો ઉદ્ઘાર કરવાની આચાર પૂર્વક ભલામણ કુરીએ છીએ. — તંત્રી

મારવાડનું એક પ્રાચીન નગર

બાહુડમેરુ

લેખક

સ્વર્ગસ્થ મુનિરાજ શ્રી હિમાંશુવિજયજી,
ન્યાય-કાવ્યતીર્થ

(ગતાંકની પૂર્ણ)

આ લેખના વિક્રાન લેખક
અને પરમ પૂજય સુનિમહારાજ
શ્રી વિદ્ધાવિજયજી મહારાજના
શિષ્ય પરમ પૂજય સુનિમહારાજ
શ્રી હિમાંશુવિજયજી મહારાજ,
ન્યાય-સાહિત્ય-તીર્થ, તકીલ-કાર-
નો, ૩૨-૩૩ વર્ધની નાની વધે,
એકાએક સ્વર્ગવાસ થયાના દુઃખ-
લયી સમાચાર નેંધતાં અમને
અત્યંત રોક થાય છે. “શ્રી જૈન
સત્ય મકાશ”ને સમૃદ્ધ બનાવવામાં
અમને તેઓશ્રીની વિક્રતાને અનેક
વખત લાભ મળ્યો છે.

તેઓશ્રીના આત્મને શાંતિ
મળો ! —તંત્રી

બાહુડમેરના શાસક : અંતરાવ સાંખ્યેઃ :

અહીં તપાસ કરતાં ડેટલાક દુહાએં અને વાતોથી એમ જથ્યાય છે કે અહીંથાં
પહેલાં “ અંતરાવ સાંખ્યે ” રાજ્ય કરતો હતો. મને લાગે છે કે — “ સાંખ્યા ”
એ પરમાર રાજ્યપુતોની એક શાખા છે. આ અંતરાવ સાંખ્યે પ્રતાપી રાજ હતો.
આવન રાજન્યા અહીંના રાજની આગ્રામાં રહેતા હતા. તેનો પ્રતાપ શત્રુઓને
ભયભીત બનાવતો હતો.

હેઠેવાય છે કે — મંગલ નામનો એક આરોટ એક વખત ગિરનારના રાજ કરાટ
પાસે પહોંચ્યો. આરોટ કરેલી સ્તુતિથી રાજ પ્રસન્ન થયો. અને આરોટને ર્ધનામ
માગવાનું કહ્યું. એટલે તેણે રાજની પાદઢીની માગણી કરી. રાજને અને સમજનવા
પ્રયત્ન કર્યો કે “ હે આરોટ, તમે તો અધાને નમસ્કાર કરનારા રહ્યા, અને મારી પાદઢી
એવી રીતે નમતી રહે એ કેમ પાલવે ? માટે તમે બીજું ને કંઈ કંઈ હોય તે માગો !
પણ આરોટ એકનો એ ન થયો અને એ પાદઢી પહેરીને કાઈને પણ પોતાનું મસ્તક
નહિં નમાવવાની શરતે તેણે પાદઢી દાનમા-બેટ-લીધી.

ત્યાંથી કરતો કરતો એ આરોટ બાહુડમેરના રાજ અંતરાવ સાંખ્યા પાસે આવ્યો,
અને પેદી પાદઢી હાથમાં રાખીને એણે રાજને પ્રયામ કર્યા. ક્રોધિત થયેલા રાજને
એમ કરવાનું કારણ પૂછતાં એણે બધી હકિકત કહી સંભળાવી. ગુજરાતના રાજની
આવી ક્રીતિ અંતરાવ સાંખ્યાને અસર્વ થઈ પડી. એણે આજા કરીને પોતાના
સુજાન મહેતા નામના દ્વિવાનની માર્ગિત કપટ અને કુશળતાથી કવાટને બાંધી આણુંથ્યો,
અને તેનો સિંહની ભાંડક એક પાંજરામાં પૂરીને ખીંચો જ્યાંથી પાણી ભરવા જતી
તર્યા એ પાંજરાં રાણ્યું. જતી આવતી ઝીંગ્યા તેનો ઉપહાસ કરતી.

आ वर्खते भाष्डमेरमां 'अभीया' नामनी एक काहियावाडी आर्म रहेती हती.* ते पोताना राजनो आ उपहास सङ्घन न करी शकी. पण् एडली आर्म अने ते पण् शुद्धरना परहेशमां शुं करी शके? छतां तेने आवी अपमानजनक रिक्तिमांथी क्वाटना छुटकाराने विश्वास तो होतो ज! कारणु के क्वाट अने उगडाना [पराक्रमी ते सुपरिचित हती.

क्वाटना पांजरे पुरायाना वर्तमानथी काहियावाडना वीरा गूम आवेशमां आवी गया. आ बाजू अंतराव सांखदो पण् डार्छ रीते ओछो उतरे ओवो न हो. सिंध लेवा हूरना देशना राजने हरावो ए सहेलु न हुं. आ प्रसंग माटे भोवडी थवा माटे पण् डार्छ तैयार न हुं. छेवटे क्वाटना भाणेज उगडाए ए काम माथे लीधुं.

सिंधमां एकहरे वरसाह ओछो पडे छे अने तेथी त्यां धर्षीनार हुकाण पडे छे. ते वर्खते त्यां हुकाण प्रवर्तीतो होतो अने अनवरो भाटे धासनी अहु ज तंगी जस्ताती हती. आ परिस्थितिनो पोताना भाटे लाल लेवानो उगडाए वियार क्यो. तेणे पांचसो गाडी धासनां लर्हां अने ए हरेक गाडामां धासनी अंहर पोताना सुखटोने संताडी राख्या. अने ते अधां गाडां लर्हने भाष्डमेरमां आवी पहेंच्यो. अण्हीते वर्खते आवी भजेला आटवां अधां धासनां गाडांथी लेङ्का धणा राज थया. उगडाए तेमांथी छुटक धास वेच्यवानी ना कही अने राज अने अधा अमलदारो एक स्थाने भेगा भणाने जे लाव नक्की करै ते लावे अधुरे धास एकी साथे वेच्यवानुं कहुं. लेङ्काने धासनी धणी ज जरूर हती एटवे एती शरत क्षुब्ध राखवामां आवी अने राज अने अधाय अमलदारो लाव-ताल नक्की कर्ना भाटे भेगा थया.

पोताने लेईती लाग आवी पहेंचेवो लेइने उगडाए पोतानी साथग उपर नस थाप भारीने सँडेत क्यो एटवे हथियारथी सुसन्ज थेवेका अधाय सुभटो अहार कुही पडचा अने शत्रु उपर तूठी पडचा. राज के तेना भाणसो शखडीन हना एटवे तेऩो आ साव अक्षिपत आक्रमणुनो प्रतीकार न करी शक्या. ज्ञेतनेतार्मा सातसो सांखला राजपुतो अने भीज १५०० राजकर्मचारियो खपी गया.

आवेशमां आवेलुं सैन्य ज्यारे राजनी पाछण पडचुं त्यारे तेनी राणी एती उगडाने विनववा लागी के—

सात सो मार्या सांखला, पन्दर सो परधान।

एक मत मारे मारो अंतराव सांखला, तजे ऊगेजेरी आण॥

[हे उगडा, तें सातसो सांखला राजपुतो अने १५०० अमलवारेने भारी नाख्या के. हवे तुं एक भारा अंतराव सांखलाने न भारीश! तने शुरुन्देवनी आणु के.]

आथी उगडाए अंतरावने भार्या नहीं, पण् बांधी लीद्या. काहियावाडी वीरोनुं आ पराक्रम लेइने पेली अभीया भीज भाष्डमेरोने संभाधती एली उही के—

* डार्छ कहे छे के ते राज क्वाटनी भेन थती हती.

જુવો જોવણહારીઓ, ગોખે કાડો ગત ।
અમીયા કહેતો હેંસથી, ઉગડો આયો આજ ॥

[હે યોવનવતી ખ્રીઓ, ગોંખમાંથી અહાર મોટું કાઢીને આજે ઉગડો આયો છે તેને (જરા) નીકાળો !]

છાતી ઉપર છેલડો, સર ઉપર વાટ ।
કવાટ ઉઠ સુજરો કરે, તો લાજે ગઢગિરનાર ॥

[કવાટને નમાવવા ભાઈ તેની છાતી ઉપર મણીદું મૂક્યું અને માથા ઉપર થઈને કોડા જરા આવવા લાગ્યા. છતાં જે કવાટ ઉડીને પ્રણામ કરે તો ગિરનનો શદ લાણ ભરે !]

સુરજ પચ્છીમ ઉગસી, ભોયંગમ ન ઝેલે ભાર ।
કવાટ ઉઠ સુજરો કરે, તો લાજે ગઢગિરનાર ॥

[કવાટ જે ઉડીને પ્રણામ કરે તો ગઢગિરનાર લાણ ભરે, તો સૂર્ય પશ્ચિમમાં ઉંચે અને તો શેષનાગ પોતાનો લાર ઉપાડ્યો અંધ કરે (પૃથ્વી રસાતલ જય).]

શવૃનું બળ જોધને છેવડે અંતરાવે નમતું આપ્યું અને કાટે તેને અંધન-મુક્તા ક્ષો. પણીથી પણ અંતરાવે કવાટને નમાવવા ધણા ફાંદાં ભાર્યા પણ એ વીર અણું નમ જ રહ્યો,

આ કથાનક, અમે “ જૂના ”માં રહેતા જુદા જુદા લોકાના માટેથી સાંભળ્યું હતું તેવું અહીં ઉત્તાર્યું છે. આમાંનો સત્યાંશ તો ભારીક શોધખોળ પછી જ મળી શકે. છતાં આ પ્રદેશમાંના જૈન, બ્યાક્ષણ, રાજપુત, જટ, ભીલ વગેરે જાતિના નાના મોટાં લોકિમાં આ કથા પ્રચયિત છે એ વાત તો સ્વીકારવી જ જોઈએ. એટલે એમાં અમુક અંશે ચૈતિહાસિકતા જરૂર છે. કાડીઆવાડની વીરગાથા સમી આ કથાની શોધ થાય તો જરૂર ધણું નાણુંનું મળી શકે ! અસ્તુ.

x

x

x

જૂના બાડમેરથી લગભગ ૧૦ માઘદ અને સિંધ તરફ જરીની નેધપુર રેલ્વેના ખડીન (Khadin) સ્ટેશનથી લગભગ ઉ માઈલની દૂરીપર, અત્યારના ‘હાથમા’ ગામની પાડોશમાં એક ડિરાજ, નામતું પ્રાચીન ગામ છે. આ જોવા ભાઈ અમે (હું અને દત્તિહાસ-પ્રેમી શ્રી જ્યનતિવિજ્યજ્ઞ મહારાજ આહિ) તારિખ ૭-૩-૩૭૮ હિન્દે ગયા હતા. અહીં સુન્દર શિલ્પકળાના નમુનાસમાં પાંચ આલીશાન મંહિરો છે. તેમાંનું મોટું મંહિર-જે મહાહેવનું મંહિર છે-તેમાં રંગમંડપમાં પેસતાં ઉત્તર દક્ષિણમાં ચાર શિલાલેખો છે x આ શિલાલેખો ઉપરથી જાણી શકાય છે કે બાંનો રાજ મહારાજ કુમારપણી આગામાં હતો. આમો ચુભરાતના ડેટલાક સોલાંકો વંશના રાજખોનાં, મહારાજ કુમારપણ સુધીનાં નામો પણ આપેલાં છે. તે વખતે ગિરનારનું રાજ્ય પણ કુમારપણની જતા નીચે હતું*

* આ મંહિર અને શિલાલેખ વિષે સમય મળતાં હું જલ્દો કેખ લખવા પ્રયત્ન કરીય.

* આ ભાઈ જુઓ “ સિદ્ધરાજ જયસિંહ શું કર્યું ” શીર્ષક માર્ગ કેખ.

પરમારોની પડતી :

જૂના બાહુદમેરમાં પરમારો (સાંખ્યાઓ) નું રાજ્ય ક્યાંથી ક્યાં સુધી રહ્યું હતું, તેની પાકી ભાઈલી આપણુંને મળતી નથી. પરમારોનું બળ એષું થતાં તેમને હરાવીને ચૌહાણોએ તેના ઉપર પોતાની સત્તા જમારી. બાહુદમેરનો પહેંચો ચૌહાણ રાજ મુદ્દાળ કે મુંડાજુ થયો.

રાનળ મહત્વીનાથજી એક વીર ક્ષત્રિય હતા. તેમના પુત્ર માંડલિકજીની દષ્ટિ બાહુદમેર ઉપર પડી. લાગમળાં મુદ્દાળને મારીને માંડલિકજીએ બાહુદમેરનો કબજ્ઞે લીધો. પણ રાજગાધી ઉપર પોતે ન એસતા પોતાના ભાઈ રાવત લુક્કાળને એસાર્યા. કહેવાય છે કે મુંડાજુ અને માંડલિકજી સાણો અનેવી થતા હતા.

બાહુદમેરનો નાશ :

સદ્ગય ઉપત દશા કોણી કાયમ રહી છે? બાહુદમેર વણેય કાળ ખૂબ જાહોજલાલીભરી દશામાં રહ્યું. આ જાહોજલાલી દરમ્યાન તેના વિનાશને નોતરે એવા કેટલાય દોષો ધીમે ધીમે સંચિત થતા જતા હતા. ધીમે ધીમે કુસંપ, અલિમાન અને ધર્ઘિંના અંકુરઓ હેખા હેવા લાગ્યા. જ્ઞાં દુનિયાના કહેવા પ્રમાણે તો જાણે કાઈ અકળ હૈવી કારણે જ બાહુદમેરનું પતન થયું હોય એમ લાગે છે. કહેવાય છે કે ધુંધુલીમલ નામનો એક સાધુ પોતાના શિષ્ય સાથે એટલમાં રહેતો હતો અને જૂતા બાહુદમેર અને કિરતવસન (કિરાઙુ) ગામભાંથી બિક્ષા લાવીને પોતાનો નિર્વાહ કરતો હતો. આમ રોજ રોજ બિક્ષા આપતાં લોડો કંટાળના લાગ્યા. ધીમે ધીમે બિક્ષા બંધ થવા લાગ્યી. માત્ર એક કુંભારે જ બિક્ષા આપવાનું જરી રાખ્યું. આ વાતની ખબર પડતાં ધુંધુલીમલનો ચુરસ્કો વધી ગયો અને તેણે શાપ આપ્યો કે જૂના સવ સુના। પઢુન સવ દઢુન। આ આપણી જૂના બાહુદમેર અને તેથી ફરજ માટ્લિની દુરી પર આવેલું કિરાઙુ જે તે વખતે શહેર હોવાથી પઢુન (પત્તન) કહેવાતું હતું તે બન્ને ગામ તારાજ થઈ ગયાં.

આરતનાં અનેક ગામોના નાશની પાછળ આવી જ ડેકલીય દંતકથાએ. અને હૈવી કલ્પનાએ સાંકળનામાં આવે છે. પણ અત્યારનો સુગ તેને માનવા તૈયાર નથી. વળી વદ્ધલીપુરના નાશની પણ આવી જ દંતકથા પ્રસિદ્ધ છે. શું ધુંધુલીમલ જેવા માલુમો ગામનો નાશ કરવાનો જ ધ્યાયો લઈ એસતા હશે? વળી ઉપરના વાક્યમાં “જૂના” આપેલ છે ક્રનો અર્થ બાહુદમેર કરવામાં આવે છે. પણ પોતાની આખાઈના કાળમાં બાહુદમેર “જૂના” તરીકે કેવી રીતે પ્રસિદ્ધ થઈ શકે? “જૂના” એ તો નવાનો આપેક્ષિક શબ્દ છે, એટથે નંતું બાહુદમેર થયાં પહેલાં એના અસ્તિત્વની કલ્પના કરી એ પણ હાસ્યાસ્પદ છે. આ દંતકથામાં “જૂના” (બાહુદમેર) અને પઢુન (કિરાઙુ) ની વતો-હુકોકો-એટલી બધી સેળભેળ કરી હેવામાં આવી છે કે તેને વિવેક કરવાનું કર્ય દુષ્કર છે. ધતિહાસના જીડા અભ્યાસીઓ આ બાબત ગોળ્ય શોધ કરે તો જ કંઈ બુદ્ધિગમ્ય વાત મળી આવે!

પ્રાચીન બાહુદમેર વિષે આપણું જ લખ્યો હવે નવા બાહુદેર-વર્તમાન બાહુદમેર વિષે કંઈક લખવા પ્રયત્ન કરાશે.

(સંપૂર્ણ)

ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળા*

બેખ્ક-શ્રીયુત સારાભાઈ મહિલાલ નવામા

આ નિબંધને ‘ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળા’ તું નામ આપવાનો ઉદ્દેશ હેશની એકતાને સ્થાને સંપ્રદાયિક તર્ફ ઉપર ભાર મૂકવાનો નથી. ભારતવર્ષની સમગ્ર કલામાં ભાવના અને ઉદ્ઘાણનું અસુક પ્રકારનું છૈય છે; છતાં તેના સમયયુગોની દસ્તિઓ, રાજ્યકર્તાની પ્રગતિ, ધાર્મિક સંપ્રદાયની દસ્તિઓ, આશ્રયદાતાઓની દસ્તિઓ બેદ પાડી પ્રકારો બનાવવામાં આવે છે. ઉદાહરણ તરીકે દિંગું કલા, છસ્વામી કલા, રાજ્યપુત કલા, મુગલ કલા, ઔષ્ઠ કલા ધત્યાહિ. આવી બેદ-દસ્તિઓ તે તે દૃતિઓના સમુદ્દ્રાયની સમજણું અને તેના રસાસ્વાદ આપવામાં સમર્થક અને તો તે કલા-મીમાંસામાં અસ્થાને છે તેમ નહિ ગળાય. અત્યાર સુધી કલાના જે પ્રકારો પાડવામાં આવ્યા છે તે તે આ દસ્તિઓ ડેટલા ચોણ છે તે ભારતીય કલાના વિવેચનોએ વિચારવા જેવો પ્રશ્ન છે.

હું આ કલાકૃતિઓના સમુદ્દ્રાયને ઉપરના નામથી અંકિત કરું છું તેનાં કારણો નીચે પ્રમાણે છે:

(૧) આ કલાકૃતિઓનાં નિર્માણ તથા સંગ્રહ ગુજરાત (પ્રાચીન વ્યાપક અર્થ) માં થયેલા છે અને તેના કલાકારો મોટા ભાગે ગુજરાતના વતની હન.

(૨) એને જૈનાશ્રિત એટલા માટે કહી કે આ કૃતિઓમાં આવેલા વિષયો જૈન ધર્મના કથા પ્રસંગેમાંથી લીધેલા છે, તેમનું નિર્માણ કરવનાર આશ્રયદાતાઓ જૈન ધર્મી હતા અને આ કૃતિઓની સાચબણી પણ જૈનોએ સ્થાપેલા અંધકારામાં જ થયેલી છે. માત્ર એ કલાકારો પોતે કથા ધર્મના હતા તેનો ચોક્કસ નિર્ણય કરી શકતો નથી; કેટલાક વૃષ્ટ યતિઓ અને જૈન સાહુઓ આને પણ સારી અને સુંદર ચિત્રકૃતિઓનું નિર્માણ કરતા જેવામાં આવે છે તેથી માનવાને કારણ રહે છે કે એ કલાકારો મોટા ભાગે જૈનો હશે; અને કેટલાક જૈનતરો પણ હશે.

તેથી જે કે કલાકારની દસ્તિઓ આ કલામાં રહેલું શિલ્પ ગુજરાતી શિલ્પ છે, છતાં આ શિલ્પે જે ઇપ અહણ કર્યું છે તેમાં જૈનધર્મના વિષયો અને જૈન આશ્રયદાતાઓની રૂચિ નિયમક અન્યાં છે. આ કલાને બરાબર સમજવામાં તથા તેના આરના કેવામાં જૈન વિષયોને લગતી તથા તેના આશ્રયદાતાઓ વિષેની માહિતી ઉપકારક થઈ પડે છે. એમ પણ કહી શકાય કે આ વિના આ કલાની સમજણ અહુ જ અધૂરી રહે. પણ ઉપર કહ્યું તેમ શિલ્પ તો ગુજરાતી જ છે એ વિભરવાનું નથી; કેમક ધૂતર સંપ્રદાયના વિષયો નિર્પત્તી જે થાડીક કૃતિઓ મળી છે તેમાં પણ એ શિલ્પ જ રમી રહેલું છે.

સંઅહુ—ધૂતર ધર્મી પરહેશાઓ આકભણું મળેલા વિજ્ઞયના મંથી ઉન્મત થઈ ભારતીય સંસ્કૃતિના સ્મારકશિલ્પ શિલ્પ અને સાહિત્યભર્તા અન્યોનો નાશ કરતા,

* ભારતી ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષ્ઠનું તરફથી સ્વીકારાયેલા નિબંધ.

त्यारे जैन महाजनोंने आ शिल्प अने साहित्य अचाववा समर्थ प्रयत्नों कर्या हुता. तेना परिणामे आजे धार्युं साहित्य (केण जैन ज नदि ओवुं) अचावा पाम्बुं छे. मुंबार्ड धूलाकाना तेमज यूरोप अमेरिकाना नं अंतर्गत्यानोमां अत्यारे एकत्रित थमेवा भारतनी हस्तलिभित प्रतिज्ञानी तपास इरवानां आवे तो जप्तारों के तेमां भारो दिस्सो गुजरातमांथी गअेलो छे, अने तेमाये जैन यतिआ पासेथी भगेलुं धार्युं हो. गुर्जर, भीटर्न अने भाष्टार्कर मत्याहि सारो द्वाल भेगववा आ तरइ अविशेष इष्ट राजना. आ उपरान्त लक्ष धर्यु लेसवभीर, पाठ्यु, अमज्जावाह, अंलात, वडोहरा, भाणी, सुरत मत्याहि स्थणोमां अमूल्य अन्धरतो सच्चाह रहेलां छे; अने अत्यारे ए भग्यां दुर्लभ थयां छे तेनु कारण जेट्वे अंशे ए साच्चवनारायानी सांप्रदायिक अंकुचितना छे तेनाथी विशेष ए अंकुचितनाने स्थान आपानार डेटलाक प्रतो संधरनारा अने तेने वेची नाज्जनारा विद्वानोनी अग्रामाखिता छे. आवी अग्रामाखिताना दाखला क्षेली जैन यतिआना ज छे एम नथी; आवुनिक डेणवणी पामेला डेटलाक कहेवाता विद्वानो पछु आ धंदो कर्या छे.

आहमा सैकाथी अजंतानी चित्रकृष्णानी गंगा काणसागरमां लुम्ब थया भान भारतवर्षमां चित्रकृष्णाना अंकाडा क्याये पछु भग्ना आवता ढोय तो ते अर्गयारमाथा अदारमा सैका सुधी साहित्य संस्कृत अने धर्मना धोरा रंगे कुवतीश्वलती रहेली, ताड़पत्र अने काणगानी हस्तलिभित प्रतोमां सच्चाती आरती, जैनधर्मना धार्मिक इथाप्रसंगोनी चित्रकृष्णामां छे. भारतना भध्यकृष्णाना धतिलासमां गुजरात अनुपम स्थान बोगवनुं हुं ते वप्ते तेनी आव्याल्दभीना स्वामीओ, गूर्जर नरेशो अने जैन भुत्सहीओ हुता; एट्ले तेमणे स्थापत्य अने इतिर इवायानो समादर करी धतिलासमां अमर भग्यां पाऊयां छे.^१

अंथरस्थ जैन चित्रकृष्णा—गुजरातनी जैनात्मित उणा जुदा जुदा विभागामां वहेंयायेली छे. मुख्यत्वे इतीने ते जैन माहिरोना स्थापत्यमां नथा जैनधर्मना हस्तलिभित धर्मअंथामां भग्ना आवे छे.

आ ए अंगो पैकी स्थापत्यकृष्णानो प्रेहेस अहु ज विस्तृत होनाथी ते विषय लक्षित उपर राखीने प्रस्तुत निधन्धमां तेना ए ए महत्वना अंगो पैकीना एक अंग तेना धर्मअंथानी कृष्णानो भग्ना शक्तो धतिलास आपानो मारो उद्देश छे.

छेक्कां पांच वर्षे दरम्यान गुजरातनां मुख्य मुख्य शहेशेमां आवेदा जैन अन्धकारो मध्येनी चित्रकृष्णानी हस्तप्रतोना अव्यास अने आरीक अवज्ञाइनना परिणामे ने भारी जाखुमां आव्युं छे तेनु दूँक वर्ष्णन अवे रक्षु इरवा में प्रयत्न इरेख छे.

ભારતની રાજ્યું અને મુગલ કણાની પહેલાં, એટલે કે સોણમી ભણીના છેલ્લા સમય પહેલાં લદ્ય પ્રમાણના જીવિચ્વોની ઐ જનતી ચિત્રકળા મળી આવે છે. આ એ જાતમાંથી એક જાત, નેપાળ અને ઉત્તર ભંગાલ તરફની અગિયારમી સહીના સમયની મળી આવે છે; અને બીજી ગુજરાત, કાઠિયાવાડ અને રાજ્યુનાના આજુની અગિયારમી સહીના અંત સમયથી મળી આવે છે. આ અને જાતની કળાઓમાં એકખીજાનું અનુકૂલખ ડોર્ડ રિટે થયું હોય, એટલે કે એક બીજી કળાનો સીધો સંબંધ હોય એમ જાગતું નથી; પરંતુ તે અને કળાઓ પ્રાચીન ભારતવાસીઓએ પોતાની મેળે — સ્વતંત્ર રિટે ઉપસની કાદેલી છે. પૂર્વ ભારતની ચિત્રકળા મુખ્યત્વે બૌદ્ધર્મના અન્શોમાં અને પદ્ધતિમાં ભારતની ચિત્રકળા મુખ્યત્વે શૈતાભર જૈનોના હસ્તલિખિત ધર્મપ્રન્થોમાં મળી આવે છે. આ ચિત્રકળાને નણું વિલાગમાં વહેંચી નાખવી જઈએ.

પ્રાચીન સમયની આ ચિત્રકળા નાડપત્રની હસ્તપ્રતોમાં મળી આવે છે અને તાડપત્રની એ ચિત્રકળા એ વિલાગમાં વહેંચાયેલી છે. પહેલા વિલાગની શરૂઆત મૌલંકી રાખ્યના ઉદ્ઘાટન થાય છે. મહારાજાધિરાજ સિદ્ધગંજ જ્યસિંહદેવના શાન્ય-કાગની શરૂઆતમાં જ વિ. સં. ૧૧૫૭ (ઈ. સ. ૧૧૦૦) માં ગુજરાતના પ્રાચીન અંદર લુગુકંઠ (હાથનું ભર્ય) માં લખાયેલી નિશીથચુર્ણિની પ્રત હજી વિદ્વમાન છે, જે પાટણુના સંધીવિના પાડાના અંડારમાં આવેલી છે. જેના ઉપર તારીખ લખેલી છે તેવી આજ હિન સુધીમાં મળી આવેલી ‘ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળા’ ની સૌથી જૂતામાં જૂની ચિત્રવાળી પ્રત આ એક જ છે. પહેલા વિલાગનો અંત પણ જે જ અંડારની વિ. સં. ૧૩૪૫ (ઈ. સ. ૧૨૮૮) ની સાંદર્ભમાં લખાયેલી જુદી જુદી પ્રાકૃત કથાઓની તાડપત્રની પ્રતમાંના ચિત્રોથી આવે છે; કારણ કે વિ. મં. ૧૩૫૬ (ઈ. સ. ૧૨૯૬) ની સાલ પછીનાં ચિત્રોની ચિત્રકળામાં અહારની બીજી કળાઓનું મિશ્રણ થાએ ધર્મ અંશે જણાઈ આવે છે.

તાડપત્ર પરનાં ચિત્રોના બીજા વિલાગની શરૂઆત વિ. સં. ૧૩૫૭ (ઈ. સ. ૧૩૦૦) થી થાય છે અને તેનો અંત લગભગ વિ. સં. ૧૫૦૦ (ઈ. સ. ૧૪૪૩) ની આસપાસમાં આવે છે. આ બીજા વિલાગના સમય હરમ્યાનની તાડપત્રની ચિત્રોનાના નણું હસ્તપ્રતો મારા જાણવામાં આવેલી છે. ‘ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળા’ ના સર્વોત્તમ સુંદર નમૂનાએ આ નણું હસ્તપ્રતોમાં મળી આવે છે. આ નણું હસ્તપ્રતો પૈકીની એક જ પ્રત ઉપર વિ. મં. ૧૪૨૭ (ઈ. સ. ૧૩૭૦) ની તારીખ નેંધાયેલી છે અને તે અમદાવાહની ઉજમ ફોર્ઝની ધર્મર્શાળાના અન્ય-અંડારમાં આવેલી છે. બીજી એ પ્રતો પૈકીની એક પ્રત પાટણુના તપાગંઠ સંધના અંડારમાં આવેલી છે અને બીજી પ્રત છડિરની આણંહજી મંગળજાતી પેહીના અન્ય અંડારમાં આવેલી છે.

આ બીજા વિલાગના સમય હરમ્યાનનાં કેટલાંક ચિત્રો તો વાકડાંની પાટલીએ કે ને તાડપત્રના હસ્તપ્રતોના સંરક્ષણ સાર ઉપર નીચે બાંધવામાં આવતી હતી તેના ઉપર

तथा कपडां उपर पण भली आवे छे. लाडानी ऐवी एक पाठ्य वि. सं. १४२५ (ध. स. १३६८)मां चीतराओली तारीखनी नोंधवाणी भणी आवेली छे, अने कपडां उपरनां चित्रो वि. सं. १४१० (ध. स. १३५३)थी भणी आवे छे.

गुजरातनी जैनाश्रित कणाना वीज विभागनां चित्रो मुख्यत्वे कागणनी हस्तलिपित प्रतोभां भणी आवे छे. तेनी शङ्कात ध. स. नी पंहरभी सहीनी शङ्कातथी थाय छे अने विक्रमनी सोणभी सहीना छेवटनां वर्षोनां तेनो अंत आवे छे, जे वेगा ‘गुजरातनी जैनाश्रित कणा’ मुख्य कणा अने पछी राजपुत कणानी अभ्यर नीचे आवी गर्छ हती. ‘गुजरातनी जैनाश्रित कणा’ तेमां संपूर्णपैषे समाझ गर्छ.

आ वीज विभागना समय हस्तायनां जैन सिवायनां भीजां चित्रो वैष्णव संप्रदायना गण्यागांचा धर्मग्रंथेभां भणी आवे छे. परंतु पंहरभी सही पहेवांना अंथस्थ चित्रो जैन शेताभ्यर संप्रदायना धर्मग्रंथेभां ज भणी आवे छे, अने आ ज कारण्युथी आ कणाने केटलीक वजत “जैन” अगर “शेताभ्यर जैन” कणाना नाभी संभोधवाभां आवेली छे.

श्राव्युत नानालाल अमनलाल भडेता आ कणाने “गुजराती कणा!”ना नाभी ओगायावे छे परंतु मारा तश्चथी ताजेतरभां ज प्रभिक्ष करवाभां आवेल “श्री जैन चित्रकल्पद्रम” नाभाना अंथभां रळु केवेला पुरावाञ्चो उपरथी आपणे जाणी शकीये छाये के आ कणाने विकास एकला गुजरातभां ज नहि पण धर्म भारतना हरेक प्रहेशोभां थयेवो रहो. उहाहरण तरीके स्वर्गस्थ मुनिमिदाराज श्री दंसविजयज्ञना वडोहराना आत्माराम ज्ञानमंहिमां आवेली कल्पसूत्री सुवर्णाक्षरी अप्रतिम सुशोभन-कणाना नमूनावाणी प्रत वि. सं. १५२२ राजपुतानामां आवेला वनपुर (लालनुं जेनपुर)मां लाजाएवी छे. वीज एक सुवर्णाक्षरी कल्पसूत्र-कालकक्षानी प्रत वडोहरामां वयोवृद्ध गुरहेत प्रवर्तने कांतिविजयज्ञना संग्रहभां छे, ते तथा वीज एक प्रत उत्तराध्ययन सूत्रनी सुवर्णाक्षरी तथा सुशोभनकणावाणी वि. सं. १५२८भां भाजानामां आवेला भंडपहुँ (भांडपगढ)मां लाजाएवी, अमजावाहना देवसाना पाडाना उपाश्रयभां आवेला श्री द्याविमदल्ल शाल्वसंग्रहमांथी भणी आवी छे. आ तथा वीज पुरोवाञ्चो उपरथी आ कणाने “गुजराती कणा”ने भह्ले आपणे अगाउ जणुवी गया तेम “गुजरातनी कणा” (गाचीन व्यापक अर्थभां) तरीके संभोधवी वधारे वासनविक छे. आ कणाने प्रचार आभा परिम भारतमां थवानुं एक दारणु ए पण होय के ग्राचीन गुजरातना स्वतंत्र लिहु राजनीज्ञोना अजेय आडुअग्ना प्रतापे ते मुलडा गुजरात प्रहेशनी ग्राया नीचे होनाथी संबंधित छे के गुजरातना चित्रकरो लां ज्वाने दीधे आ कणाने प्रचार प्रश्निम भारतना सधणा प्रहेशोभां थयो होय. वीजनुं कारणु ए छे के आ कणाना प्राचीन समयना ताडपत्रना जे नमूनाए भणी आवा छे ते सधणा ज मुख्यत्वे करीने गुजरातना ग्राचीन पाटनगर अण्डिलपुर पाटणु तथा ते वधतना प्रभ्यात अंहर लृगुकृष्ण (भरच)ना छे.

अपूर्ण

“जैनहर्षीन” ने उत्तर

लेखक

आचार्य भग्नाराज श्रीमत् सागरानंद सुरिल.

६४ हिंगम्भर तरही नीडगता ‘जैनहर्षीन’ नामना भासिकना चोथा वर्षना आहमा अंडमां ने कँडू लभाण गेसमध्येही कडवामां आव्युं छे तेने अंगे सुधारे। कडवानी जडर होवाथी आ लेख लभाय छे, प्रथम ‘आधुनिक दशा’ नामना लेखमां हस्ता अने अव्यवालनी आपतमां सभाधान आपवानुं आगण उपर राष्ट्री, वर्तमानमां पत्यवाल जतिने अंगे प्रधानपद आपेहुं होवाथी तेना उत्तरने स्थान आपवामां आवे छे, (आ लेखमां डार्छ लेखकतुं नाम नहिं होवाथी संखव छे डे-आ लेख चैनसुभद्रास वगेरे मुख पृष्ठ उपर जखावेल नर्थमांथी डार्छ पण एक लेखकनो हो)।

“आधुनिक दशा” शीर्षक लेख

ते लेखक महाशये पत्रिवालो हिंगम्भर छे एम मानीने श्वेताम्बरोनी समाज अने तेना धर्मगुरुयो उपर मन मानितो हस्तो डरेलो छे, पण आश्र्यनी वात छे के पक्षीवाल ज्ञाति असलथी हिंगम्भर छे आ वातने साखीत कडवा भाटे एक पण पुरावो तेओ तरही देवामां आव्यो नथी, गोतानो लेख वांग्यो होवा छतां तेमां पक्षीवालना हिंगम्भरपण्यानी साधित भाटे एक पण पुरावो आपे नहि ते आधुं आश्र्यज्ञनक नथी.

लेखक धारे छे त्यां सुधी तेओअे पक्षीवालने हिंगम्भर डराववा भाटे पुरावा एकडा कडवा वाणी प्रयत्न डर्यो हो, पण ज्यारे तेओने पक्षीवाल जतिने हिंगम्भर डराववानो एक पण पुरावो नहीं भल्यो होय त्यारे ज आवी रीते अगडं अगडं लभवुं पड़ुं हो.

सुखदय भावे ने लेखकने हजु पण भारी सूचना छे के तेओअे पहेली तके तेवो पुरावो जहेर कडवो के नेथी निर्विवादपणे साखीत थाय के अमुक हिंगम्भराचार्ये, अमुक वधते, अमुक स्थाने पक्षीवाल जतिनी स्थापना करी, नेथी ते निर्विवादपणे भानी शकाय.

मने ने कँडू पुरावो भणे छे ते उपरथी तो चोक्युं थाय छे के पक्षीवाल ज्ञाति असलथी श्वेताम्बर ज छे अने नेथी श्वेताम्बर संघ तरही पक्षीवाल भाईज्ञाने धर्ममां हृष करावा तथा प्रवर्तीववा के भहव आपवामां आवे छे ते संपूर्णपणे योग्य ज छे, अने पक्षीवाल ज्ञातिना भाईज्ञाने पण ने श्वेताम्बरना रीतिरिवाजमां उघम करे छे, ते तेओना कुणने उचित ज छे.

पक्षीवाल भाईज्ञाने ध्यान राखवुं के आ हिंगम्भरभाई हमेशां श्वेताम्बरोनां तीर्थ, शास्त्र आहि उपर आकर्षण करता आव्या छे, अने नेथी तेओ आ वधते गोतानो रोप डालववामां भाकी नहीं ज राष्ट्रे, पण तेमो तमारा मूल धर्मने दृष्टपणे वणेगो, अने ते रोपवाणी लेखज्ञाथी अंश पण यत्यायमान न थाअ्यो, पक्षीवाल भाईज्ञाने खातरी राखवी जोर्जे हे-तेओ असलथी ज श्वेताम्बर छे.

५३१

श्री जैन सत्य भक्तिश

वैशाख

पद्मीवाल भाष्ठिओआ ध्यानमां राखुं के-तेमनी सातिना अंगे तो श्वेताम्बर समुदायनो पद्मीवाल नामना गच्छ प्रवत्संदेवा छे.^१

पद्मीवाल भाष्ठिओआ ए पथ ध्यानमां राखवानुं छे के-सात सो सात सो वर्ष पहेलाथी तेओ श्वेताम्बर धर्म प्रभाषे प्रतिभाओ भरवता अने पूजा करता आया छे, ते भाटे डार्छ पथ प्रकारे हिंगम्बरोना आ 'जैनदर्शन' लेवां लभाषोने अंगे अंशे पथ होराशो नहि. तमारी श्वेताम्बरपण्यानी साभित भाटे प्रतिभाना लेखो २४४ छे.^२

पद्मीवाल भाष्ठिओआ अने जैनदर्शनिना लेखडे-ध्यानमां राखुं के-पद्मीवाल लोकानी उत्पत्ति पद्मो नामना पार्श्वनाथना तीर्थथी थेली छे. जुओः—

जीरापल्लिपुरे फलद्विनगरे वाणारसीस्वामिने,
श्रीशखेश्वरनाणके च मथुरासेसीसके स्तंभने ।
श्रीमहाहडपल्लिलंपिटटयोनांगस्वरे श्रीपुरे,
भालज्ये करहेटके जिनपतिश्रीपार्श्वनाथं स्तुते ॥१॥

आ काव्य जमनगरनी ६२४४जैनशाणानी नानी परचुरण स्तोत्रनी जुनी प्रत-पा-धमां छे. आ काव्यथी २४४ समज शक्तय छे के पद्मीवालनी उत्पत्ति दाइपत्रि के शुश्राप्ति पार्श्वनाथना तीर्थने अंगे थेली होय.

उपर जल्लावेल सिवाय पद्मीवाल गच्छनी आभी पद्मावती अ्यात्मानंद शताभिना रमरणुइमां प्रसिद्ध थर्थ गेलेकी छे ते तथा व्यापाय अंथो ते गच्छना आयार्थो अंकेकानी नेंध तेमां आपेकी छे. अने भूर्तिना लेखो पथ तेमां सूचवेला छे. ए अद्य लेई ने जैनदर्शनकारे पद्मीवालो हिंगम्बर छे, ए इहेवानी भूल न करवी ते ७ योग्य छे.

१. (१) ॥८.॥ आषाढादि संवत् १६०१ वर्षे चैत्रवदि ३ दिने सोमवारे हस्तनक्षत्रे वीरमपुरे राउल श्रीजगमालजी विजयराजये श्रीपल्लीपालगच्छे भट्टारक श्रीयशोदेवसुरिजी विज [यमा]ने श्रीपार्श्वनाथजी नैत्ये श्रीपल्लीगच्छसंघेन गवाक्षन्त्रय—

(२) .. सहिता सुशोभना निर्गमनतुष्टिका कारपिता उपाध्याय श्रीहरशेखराणा पड्ग्रभाकरो-पाध्याय श्रीकनकशेखर तत्पट्टालंकारोपाध्याय श्री देवशेखरैः स्वर्गतैः उपाध्याय कनकशेखर हस्तदीक्षितैने उपाध्याय श्री सुमतिशेखरेण स्वहस्तेन

२. जुओ. प्राचीन लेख संग्रह भा. १. प्रकाशक यशोविज्यय जैन अंथभाणा.

(१) संवत् १५०७ वर्षे कागुण वादि ३ दिने श्रीपल्लीवालगच्छे उपकेशधाकडगोत्रे सा. नाल्हा पु. साह करण भा. बाह टहकूं पुत्रशिवराजसहितेन पित्रो [:] श्रेयसे श्रीनमिनाथबिंबं कारित (तं) प्रतिष्ठि (छि) तं श्रीयशोदेवसुरिमिः

(२) संवत् १३९७ माघ शु. १० शनौ पल्लीता(वा) लज्जातीय ट. छाडा भा. नायकिसुत श्रेयसे श्रीमहावीरबिंबं कारितं प्र. श्रीर्धम्बोषगच्छे श्रीमानतुहङ्गसूरिशिष्यः श्रीहंसराजसूरिभिः

(३) सं. १५२९ वर्षे कागुण वदि ३ शुक्रे पल्लीवालज्जातीय मं. मंडलिकभार्या शाणी पुत्र लालाकेन भार्या रंगीमुख्य कुँडब्युतेन श्रीअंचलगच्छेश श्रीजयकेसरीसूरीणामुपदेशेन श्री चंद्रप्रभ बिंबं कारित

हिगम्यर लाईओं एवं श्रेताम्भरोनां केसरीयाज ज्वां तीर्थी तेमग तत्त्वार्थीहि अंथो-
ने जेम हड्ड कर्हीं छे तेम पक्षीवालनी कामने पण ते हड्ड करवा भागे छे. चोरी
करनारो पण जाहेर रीते अने अलाटकार पूर्वक चोरी करे तो तेने-धाडपाहु के लूंटारो
अहेवा पडे छे-माटे-ए शब्दो गोताना उपर लाय न थाय ते वातनुं हिगम्यर लाई-
ओं एवं पूरती रीते ध्यान राखुं. जेम चोरी करनारा लूंटाइने चोरेवा अने लूंटेवा
माल पाणी नय, ते वर्षते हायपीट करवी पडे छे तेवी रीते हिगम्यरा हायपीट
करी पक्षीवालो भाटे रोहलां द्वे ते उवण अन्याय सिवाय भीजुं कंधि छे ज नहि.

“श्रेताम्भरीय आगम” शीर्षक लेख

जैनदर्शनना एज अंकमां पक्षीवाल लाईओने जुडी रीते भरभाववा भाटे श्रेता-
म्भरीय आगमनना भथाजेथी जे लेख लभवामां आव्यो छे ते केवल पक्षीवाल लाईओने
इसाववा भाटे छे. प्रथम तो ते लेखमां क्वार्ठ पण प्रकारे आगमना उत्थान संबंधी
कंधि पण लक्ष्मीन ज नयी. लक्ष्मीन जे श्रुतकेवली हता तेमनो हुष्कालनी वर्षते निवास
नेपाल देशमां ज द्वेता. ते वर्षते तेओ लक्ष्मीक तरक्क गेलेवा ज नयी अने ते हुष्कालमां
चौह पूर्वी केटखुं संभूर्जु श्रुत जगवार्त रहेकुं ज द्वं, भाटे अरण्य-ऐवजेणावा लद्राहाङु
श्रुतकेवलि छे ज नहि. (अवणु ऐवजेणाना लेखनी-पवित्रता अने कल्पितता भाटे
श्रीभानु दर्शनविजयज्ञना) “दिगंबर शास्त्र कैसे बने” ए वर्गेरे लेख ज्ञेर्ष लेवा.

श्रेताम्भरीय आगम नाभना लेखने लभनारो अनायासे एम तो उम्हुदी लीधुं
छे जे कै-श्रेताम्भर-हिगम्यर तरीकेना विभागमां मालवानो देश डेन्द तरीके छे अने
तेथी श्रेताम्भर आगम एः रथवीर गोथी, भहसमक द्वाराए हिगम्यरती उत्पत्ति
ज्ञान्वे छे ते सत्य साखीत थाय छे.

वधारे आश्र्यनी वात तो ए छे के तेओ वस्त्र, पात्र अने ओणी आहि
उपकरण्याने श्रेताम्भरो दुष्कालने लीधे राख्यां, एवुं हड्डहुं जुहुं अने युक्तिथी
पण शन्य ऐवे छे.

वगा आ भार्त लमे छे के हुष्कालने लीधे एक वेरे साधुओं आवुं छाडी हायुं. आ
भाईने एटली पण अपर नयी के साधुओने भाटे वरपरातो भिक्षु शम्भु शम्भु ज अनेक धरेथी
भोजन लेवानुं २५४ सूचवे छे. भाटे साची हुष्काल ए छे कै-हिगम्यरो ए पात्र वर्गेरे
उपकरणु छाडी हायुं तेथी तेओनो भिक्षावृत्ति छाडी हाय एक ज वेर भोजन लेवुं पड्युं.
एवुं छां श्रेताम्भरोनी भिक्षावृत्ति पर होय दोणवो ते केवल पक्षमेहु ज छे.

एटखुं ज नहि पण वस्तुओनुं राख्युं, जे हुष्कालने अंगे श्रेताम्भरो दुष्कुं
एम जे ज्ञान्वे छे ते केवण कहेनारं द्वार्यास्पद कथन ज छे. केमके हुष्कालनी वर्षते
वस्त्रानी हाजत नवी उली करे ए तो हिगम्यरोना ज भगजमां शेवे.

लेखके ध्यान राख्युं के श्रेताम्भरना क्वार्ठ पण अन्यायमां लद्राहाङु श्रुतकेवली भहाराज
दुष्कालमां लक्ष्मीक गया एवुं लभाय छे ज नहि अने ते लेखकना ज्ञेवामां आव्युं होय
तो तेमणे पहेली ज तडे जाहेर करवुं. आवां आवां जुहां लभाज्ञा. करीने श्रेताम्भरोने
भरभाववा अने इसाववा ए क्वार्ठ पण प्रकारे चोाय नयी.

श्रुतकेवली लगवान लदध्याहुज्ञना वर्षते जिनकल्पनो व्युच्छेद थयो ओम कौर्त्ति पञ्च
जैन आगम कहेतु नथी अने श्वेताभ्यरो मानता पञ्च नथी. श्वेताभ्यर आगमो,
जिनकल्पनो व्युच्छेद श्री जंभुस्वामी लगवानना निर्वाणु पश्चीमी माने छे.

जुओ, विशेष आवश्यक अने प्रवचन सारोद्धार — मणपरमो हि पुलाप० गाथा.
ऐ गाथामां जिनकल्पनो व्युच्छेद रप॑ष्टपञ्च जंभुस्वामीथी ज जखाव्यो छे.

ते श्वेताभ्यरीय आगम नामना लेखने लभनारे अट्ठां पञ्च ध्यान नथी राख्यु
के झुइ चेतानी मानेली तत्त्वार्थी दीक्षामां ज भाव भावितिगनु ज अकान्तिकपञ्च छे
अने इव्यलिंगनी जजना छे तेम ज षट्प्राल्बृत वर्गेरेमां पञ्च भाव लिगनी अने-
कान्तिकता जखुवेली छे ते उपरथी अन्यलिंगे अने गुहिलिंगे भोक्ष जरानु थाय ते
शास्त्राकारने छृष्ट छे, ए हुक्कित पञ्च जेवामां आवी नहि. घरी रीते तो हिगम्भर
लेडोने नम रहेवा उपर वधारे आग्रह थयो अने तेथी ज अन्यलिंग अने गुहिलिंगथी
स्किं थवाना भेदो उडाडी हेवा पडया. (आ उपरथी जे लेडो हिगम्भर अने
श्वेताभ्यरोमां भाव छियानो ज भेद छे पञ्च तत्त्व सुखानो भेद नथी ओम मानता होय
तेओअे आंभ भोक्षवानी जडर छे.)

वला ते लेखक, खी अने नपुंसकना भोक्षने भाटे जे कल्पितपञ्च जखावे छे ते
पञ्च ज्ञाहु ज छे, कारणु के हिगम्भरोअे ज चेताना गोभर्तसारमां खीने भोक्ष जवानी
संभवाच्चा जखावी छे, अने धापनीय संघवालाच्चा तो खीनो भोक्ष रप॑ष्ट शब्दोमां
जखावे छे. घरी वात तो ए छे के हिगम्भरोअे नभपश्या उपर आग्रह रापयो अने
खीच्चा सर्वथा नम रही शडे तेवु तेमने लायु नहि. अने तेथी खीन चारित्री मनार्थ
कर्त्ती पडी अने ते ज कारण्युथी खीनो भोक्ष निषेधवो पडया. अने ते प्रसंगे नपुंसकनो
भोक्ष निषेध्यो. आवी सीधी हुक्कित पञ्च हिगम्भर लाभ्यो न तमने ए नवार्थ लेनु
छे. (ध्यानमां राख्यु के अन्य भतमां जेगालाच्चा वस्त्र वगरनी होय.)

ते लेखक जे जखावे छे के श्वेताभ्यरोअे जैनधर्मना अनुयायी अने अजैन
भार्गना अनुयायीने भोक्ष थवानु भान्यु छे, ते सर्वथा ज्ञाहु छे, तेक्के कौर्त्ति पञ्च
श्वेताभ्यर आगम सम्बन्ध दर्शन, जान अने चारित्रप भावभार्ग के लेनु नाम ज
जैनत्व छे ते सिवाय देवगजान के भोक्ष कहेतो ज नथी.

आ लेखकने कुरगङ्की कथा भाटे मूल स्थान आवश्यकनी दीक्षा जेतानु न गम्यु,
नंदीसूत्रनी भलयगिरि दीक्षा जेवानु न गम्यु, पञ्च देवण, सूत्र अने अर्थोनि ईश्वनारा
अने ओणवनारा एवा एक सामान्य मनुष्यनु करेहु ज्ञाहु भाषांतर जडयु. पञ्च ते
उपरथी श्वेताभ्यर आगमो के श्वेताभ्यर भतनी सभीक्षा के तूलना कर्त्ती ए योग्य
होर्थ शडे नहि. श्वेताभ्यर आगममां तो नथी ते तपसी अने कुरगङ्क वच्चे गुड चेलानो
संभंध, के नथी तो तेषु थुंकवाणु भोजन आहु. श्वेताभ्यर शास्त्रोअे क्षमानी पराक्रान्ते
भाटे ए कुरगङ्कनु आपेहु दृष्टान्त हिगम्भरोने न इच्छे ते तो स्वाभाविक ज छे.

लेखक ध्यान राख्यानी जडर छे के शुक्ल ध्यान मुहूर्तनी चंद्र अंदर ज होय
छे अने ते अंतर्मुहूर्तनो कण, कौर्त्ति पञ्च जातनी पहेलानी किया थती होय तेमां पञ्च
(जुओ ५४ ५४३)

अक्षय तृतीया

लेखक

आचार्य भगवान् श्रीमहाविजयपद्मसूरिण्.

अनादि कालीन ज्ञेनदर्शनमां गण्डावेला सर्वभान्यं पर्वोभां अक्षय तृतीया (धक्षु तृतीया=अभावीन) पण्डि एक पर्वं गणेहुङ्कुण्डे. आ हिवसने पर्वं दिन तरीके क्या हेतुथी मानवाभां आवे छे ? आ (प्रश्न) नो खुलासे हुङ्कमां आ प्रमाणे जग्नुवे — युगादि प्रभुश्री ऋषभहेवना पारण्डाने अगे आ हिवस पर्वं तरीके मनाय छे, तेथी ऋषभहेव अगवंतनी भीना जग्नारवी, ऐ अस्थाने न ४ गण्डाय.

उसहस्रय पारणए, इक्कुरसा आसि लोगनाहस्स | सेसाणं परमनं दिव्वाइं पंच होज्जतया ॥१॥
रिसहेससमं पत्तं, निरवज्जमिक्कुरससमं दाणं | सिंजंससमो भावो, जह होऽजा वंछियं पियमा ॥२॥

प्रथम तीर्थं कर्नो ज्ञव तेर ल्वेभान्मां पश्चानुपूर्णीक्मे त्रीज ल्वेभां ज्ञिननामकर्मने, वीसे स्थानकोनी॒ आराधना करीने निकायित अनावी भारमा ल्वें, सर्वार्थसिद्धिविभान — जे अनुत्तर विभानानां पांच विभानेनी भध्यमां रहेल छे, अने ज्यां सम्यग्दर्शनं पूर्वं क्यारिन साधनाथी ४ भनुष्ये। जर्द शडे, तथा ज्यां रहेला देवो एकावतारि होय छे, अने ते त्रीश सागरोपम प्रमाणु अवधन्योत्कृष्ट आमुनाला होय छे—तेनां विनश्वर हिव्य सुणो। ४३ सागरोपम सुधी बोगवाने, अपाढ वहि चोथे सात कुलकरोभान्ना विनीता नगरीना राज श्री नाभि राजनी भद्रेवी मातानी दुक्षिमां पधार्या। तव भास अने ४ हिवस वीत्याबाद — साथणमां वृषभ लं छनवाणा श्री प्रथम तीर्थं कर धन राशि — उत्तराषाढा नक्षत्रमां चैत्र वहि आइमे अर्धरात्रीने॒ जन्म याम्या। पांचसे धनुष्यनी सुवर्णवर्णी॑ कायाना धारक प्रभुहेव अतुहुमे भोटा थथा। २० लाख पूर्वं काण सुधी दुमार अवस्थामां रख्या। धूद्रे विनीता नगरी वसावी राज्यालिषेक क्यों। ६३ लाख पूर्वी सुधी राजपाण्यं भोगव्यु, प्रभुने सुमंगला अने सुनंहा नामनी ऐ राणी ही। अरताहि पुत्रा अने सूर्योशा आहि पौत्रा हता। चैत्र वहि आइमे ४००० हजार परिवारनी साथे ४४ तप करी वडना आडनी तीचे पौतानी जन्म नगरी (अयोध्या) मां संयमपद याम्या। ते वजते प्रभुने भनःपर्यवत्तान उपलयुं, धूद्रे स्थापन करेल देवदृष्ट्यधारक, अजिनालिं, लगवान इष्टभद्रे तपस्ती इपे पृथ्वी उपर विहार क्यों। आ अवसरे छस्तिनागपुर (गजपुर) मां आहुष्यलिना पुत्र सोभयशा राजने अंयांस नामने पुत्र होतो। (जेनुं वर्णन आगण जग्नावीयुं) पूर्वं भवमां अविला लाभान्तराय कर्मना उद्यथी प्रभुने निर्दीप आहार लगभग आर भद्रिना सुधी मली न शक्यो। आ स्थितिमां प्रभु ज्यारे छस्तिनागपुर पधार्या, ते हिवसनी रात्रिचे अंयांसकुमार अने सोभयशा पिता तथा सुषुद्धि नामना (नगर) शेईते आ प्रमाणे स्वेनां आव्यां :

१. धेला अने छेला तीर्थं करे वीसे स्थानकोनी॒ आराधना करी छे, अने भावीना भावीश तीर्थं करीचे एकाहि स्थानकोनी साधना करी छे, आनी सविस्तर भीना त्रिष्टीय चरित्र, श्री विश्वाति स्थानाभूत संग्रह — आहिला जाणी लेवा.

२. भर्वे॑ तीर्थं करीना भध्य रात्रे ४ जन्म थाम.

(१) श्याम अनेका भेदभर्तने धोर्छने में उज्ज्वल अनांगो—आ प्रमाणे श्रेयांसने स्वप्न आयुः। (२) सूर्य बिंबस्थि भरी पडेलां कन्तर किरणेने श्रेयांसद्गमारे सूर्य बिंबमां जेडी दीधां — ऐसुं सुखुद्विषेऽने स्वप्नं आयुः। (३) ऐक शूरवीर पुरुषने धण्डा शत्रुओंसे वेरी लीधीं होतो, ते शत्रुपुरुष श्रेयांसद्गमारन्ति महाथी विजय पायो—ऐ प्रमाणे सोभयशा राजने स्वप्नं आयुः। सवारे तरें जणा राजक्येरीमां ऐकहा थथा। स्वप्ननी भीना जाणुने राज वगेरे वधाओंकहुँ के—“आजे श्रेयांसद्गमारने डाई अपूर्व लाल थवो नेईओ。” आउयोहाये गन्युं पण तेवुं ज.

प्रभुहेव इता इता श्रेयांसद्गमारना म्हेल तरइ आवी रखा हता। झडामां ऐडेला श्रेयांसद्गमार प्रभुहेवने जेईने धण्डां ज खूशी थथा। आ वज्ञतनी परिशिथनि ऐवा ली के—लोडेओंकै डॉर्च द्विस साधुने जेयेला नहि, वणा युगलिकपण्डानो विच्छेद थ्याने पण् अस्य वज्ञत ज थयो होतो। तेथी तेमने ‘कर्म रीते साधुने हान देवाय,’ ऐ बाबतनो अनुभव पण् कथांस्थी होय? आ ज करण्थी तेमा प्रभुने जेईने मणि, सोनुं, छाथी, वौडा वगेरे द्वाने तेयार थता, परंतु ज्यारे प्रभु कर्म पण् न लेतां त्यारे “अमारा उपर प्रभु नाराज थयो हे,” ऐसुं अनुमान करी वण्डा वौंचाट भयावता होता। आ रीते लगलग ऐक वर्ष वीत्या आह प्रभु अहों (श्रेयांसद्गमारना म्हेल तरइ) पधार्या। श्रेयांसद्गमारे प्रभुने जेईने विचार कर्यो के—“अहो! पूर्वे में आवा साधुवेष जेया हे,” वगेरे विशेष विचार करतां श्रेयांसद्गमारने ज्ञानिस्मरण जान थयु। [ज्ञानि स्मरण ए भतिशाननो प्रारंभ हे। ऐनाथी वधारेमां वधारे पाळज्वा झांच्याता भवेनी भीना जाणी शकाय, ऐम आचारांगसूत्रना ग्रथम अध्ययने प्हेला उद्देशामां कहुँ हे।] आ ज्ञानि स्मरणना ग्रतापे श्रेयांसद्गमारे पोतानी साथे प्रभुनो नव भवनो^१ परिचय आ प्रमाणे जाण्यो। भम्यकल्प पाम्या पक्षी भवनी गणनी गणनानी अपेक्षाकृ प्रभु प्हेला भवमां धनसार्थवाह होता। भीज भवमां युगलिया होता, त्रीज भवमां देवता होता, चौथा भवमां महाअवराज होता, पांचमे भवे लकितांगनामे देव थथा। (अहोंथी श्रेयांसना संबंधनी भीना शह थर्च.) अहों श्रेयांसनो ज्ञव प्हेलां धर्मिणी नामनी औना भवमां नियाण्युं करीने ते (श्रेयांसनो ज्ञव) लकितांगहेकनी स्वयंप्रभा नामे देवी थर्च होती। छाड भवमां लकितांग (प्रभु) तो ज्ञव वजंधर राज थयो, श्रेयांसनो ज्ञव तेमनी श्रीमती नामे राणी थयो। ज्ञानमे भवे ज्ञने युगलिया थथा। आठमे भवे प्हेला औधर्म देव लोङ भंने देवता थथा। नवमे भवे प्रभुनो ज्ञव शत्रानन्द नामे वैद्य थयो, त्यारे श्रेयांसनो ज्ञव तेमनो परम मित्र उशव नामे ऐषि पुत्र होतो। दशमा भवे आरमा अस्युत देव लोङ ऐषि जण्डा भित्र देव थथा। अगियारमा भवे प्रभु यक्षवर्ति थथा त्यारे श्रेयांसनो ज्ञव तेमनो आरथि होतो। आरमा भवे भंने सर्वार्थसिद्ध विभाने देव होता। अने तेरमा भवे प्रभु तीर्थकर थथा अने श्रेयांसनो ज्ञव तेमनो श्रेयांस नामे अपौत्र थयो। ऐम नवे भवनो संबंध ज्ञानिस्मरण जानथी श्रेयांसे जाण्यो।

चोते प्हेलां साधुपाण्युं अनुभवेलुं हतुं, तेथी श्रेयासे विचार्युं के आ (हाथाआहिनं हान देनाऱ्य) लोङा भीनसमजणुथी येऊय हानने जाणुता नयी। जे प्रभुओं तरें

^१ अन्यत आठ भवनो संबंध ज्ञानिस्मरण जाण्यो ऐम कहुँ हे।

भुवनना राज्यनो व्याग करी संयमण्डलने आद्युं छे, ते प्रभु — राजदेव नगैरे अनेक अनर्थना कारणभूत भणि आहि परियङ्गने शी रात ल्ये ? ज्ञातिस्मरण्युथी हुं दानविधि जाणुं छुं, माटे ते प्रभाणे करी खातावुं.” ऐम विचारी श्रेयांसकुमारे गोपभाठी ज्यां प्रभु उभा दता त्यां आवाने त्रषु प्रदक्षिणा होइ, ऐ हाथ जेती, नमरकार इरी, आगले उभा रही, उद्घासपूर्वक आ प्रभाणे वीनांति करी के — “ हे कृपासमुद्र, अदार कोडिकी सागरापम नेटेला काल सुधी विच्छेद पामेल साधुते निर्दीप आहार लेवानो विधि प्रकट करो, अने भारे धेर शेळडीना रसना ने १०८ धडाच्चा भेट आवेला छे ते प्रासुद आहारने कृपा करी व्हेली (अलण्डिकरी) भारी लवसमुद्रथी निस्तार करो ! आपनां हर्षनना प्रभावे ज अने प्रगट थेमेल ज्ञातिस्मरण्यु ज्ञानथी हुं अमण्ड शुद्ध छुं के — शाल, तप अने आवनाथी यूडल लव्य ल्लवे। दानद्युपी पाठिया विना लवसमुद्र न ज तरी राडे। परम पुण्येहये उत्तम चित, वित अने पात्रो भने समागम थयो छे, माटे कृपा करी भारे लाथे हान अलण्ड करी भने लवसमुद्रनो पार पमाडो.” आ विनंतीनां वचन सांखणी यतुर्जनी प्रभुच्ये धक्षिणसने निर्दीप जाणी व्हने लाथ भेगा करी आगण धर्या त्यारे श्रेयांसे — आनंदाना आंसु लावाने, शेमग्रय विकस्वर थर्धने, “ आने हुं धन्य छुं, इतार्थ छुं,” ऐम अडुमान अने अनुभेदना गरिस्त वचने शेलवापूर्वक शेळडीना रस व्हेलाराये। श्रेयांसे हानना पांचे दूषण्या हूर करी पांचे भूषण्या साचव्यां ल्लतां, ते आ प्रभाणे — अनादोरा विलंबव्य, वैमुल्यं विप्रियं वचः । पश्चात्तापश्च पंचामी, सदानं दूषयत्यमी ॥ १ ॥ आनन्दाश्रूणि गमञ्चः, बहुमानं प्रियं वचः । किंचानुमोदना पात्र—दानभूषणपंचकम् ॥ २ ॥

तरुणे कालना तीर्थंकरोनी माझक महान्नपलहेव पणु कृपावलम्बिधवंत लेडितर पुरुष हता तेथी प्रभुच्ये १०८ धडाप्रभाणु रस व्हेलेण्या छता लम्बिधना प्रभावे एक बिंदु पणु नीचे न पडव्यू. दान-भद्रिभा पणु जुऱ्यो ! लेनार — प्रभुना लाथ नीचे, अने हेनार — लायना लाथ उपर आवे. दान ए आड, दायक अने अनुभेद (ए त्रिषु)ने तारनार होवाथी चार प्रदानता धर्मभां हानने प्रथम उड्हेल छे. रत्नपानै समा प्रभुने हान हेतां श्रेयांसकुमारना र्हप्यनी पार न रखो.

आ प्रसंगे हेवे पणु भजिनो प्रसंग साचववा इप विवेकने भूलता नथी. तेओ पंच हिव्य प्रगट करे छे. ते आ प्रभाणे — १ अहेहान ! अहेहान ! ऐवा उद्घोषण्या करे छे. २ हुंदुलि वगाउे छे. ३ तीर्थंकर प्रभुना प्रथम पारणे साडाआर लाख करोड अने ते पछीना पाचण्याच्चामां साडाआर लाख सोनीया रत्नानी वृष्टि थाय छे, ए नियम प्रभाणे तिर्यङ्गलंभग हेवाच्च १२॥ करोड सोनीया रत्नानी वृष्टि करी. ४ हेवाच्च हेवतार्ध वाजित्रो वगाऊयां. ५ हेवे ऐकडा थया अने वक्त्र, सुगंधीजल, पुण्यादिनी वृष्टि करी. श्रेयांसनु धर सुवर्णाहिथी भराई गयुं, अने तरुणे भुवनमां धान्याहिनी निष्पत्ति थर्ध.

प्रभुनो लाथ रमथी भरायो अने तरुणे भुवनमां श्रेयांसने यश इलायो. श्रेयांस कुमार निःपम सुखना भाजन भन्या. कड्डुं पणु छे के —

१ शास्त्रमां—रत्नपात्र समान तीर्थंकर अने साबिलाप छोवाथी भुनिवरोने सुवर्णपात्र समान-तथा श्रावकोने इथपात्र समान कवा छे.

भवणं धणेण भुवरणं, जसेण भयवं रसेण पदिहत्ये ।

अप्णा निरुवमसुक्सं, सुपत्तदाणं महागवियं ॥ १ ॥

सुवर्णपात्र समान मुनिवरैने दान हेतां अनेक रीते द्विविध लाल थाय छे — तो पधी रत्नपात्र समान तीर्थं करते दानहेतारे। लब्ध ज्ञव विशेष लाल पामे, ऐमां नवार्थ शी? दायकना छ भलिनना शोजो फूर थाय, अने ते लवमां अथवा ज़िर त्रीने अवे ते दायक लब्ध मुक्ति पामे ज.

अर्थांसंकुमारे आ प्रकाशनुं भद्राप्रभावशालि सुपात्र दान द्विवृं नेथी ते अक्षय सुख पाम्या। आ सुदाथी ऐने सामान्य त्रीज न कहेतां अक्षय त्रीज कहेवामां आवे छे। प्रक्षुग्गे आ हिवसे छक्षुरसनुं पारण्युं कुर्युं तेथी ते छक्षुतृतीया पणु कहेवाय छे।

अन्न—कड्डक अधिक एक वर्ष सुधी प्रक्षुते निर्देष आहार न मल्यो, तेनु शु शरण्यु?

उत्तर—पाचला लवमां अलावातामां एकडा करेला धान्यने बगहो आता हता, ऐटेले ऐडुतो भारता हता, त्यारे प्रक्षुता ज्ञवे ऐडुतेने कहुं के—“मोहे शींकु आधवाथी तेथो धान्य नहि आर्थ शके”. ऐडुतोच्चे कहुं के, अमने शींकु आधवाता नवी आवडतु, त्यारे प्रक्षुग्गे अणहोना मोहे शींकु बांध्युं तेथी बगहोच्चे ३६० नीसासा मूळ्या। ऐम बगहोने हुँय देवाथी ने लाभान्तराय कर्म बांध्युं तेनो अभावा शब्द वीत्याहार दीक्षाना हिवसे उद्य थेचो, अने साधिक वर्ष सुधी ते उद्य चालु रख्यो। कर्मक्षीण थेचा आह प्रक्षुते आहार भल्यो।

आ आहार देवाना प्रभावे अर्थांसंकुमार मुक्तिपद पाम्या। आडीना नीर्थं करोच्चे परभान (भार) थी पारण्युं कुर्युं हतु. प्रथम पारण्युं कर्या आद प्रक्षु १००० वर्ष सुधी छद्वस्थपणामां विचर्या। त्यारभाव अटूमना तपभां रहेला प्रक्षुते इगण्य वहि अगिभासे पुरिमताल नगरे क्षुपक्षेषिभामां यठतां ध्यानान्तरीयकाले लोकालोक प्रकाशक उवलज्जन प्रक्षु थयुं। प्रक्षुदेवे तीर्थनी स्थापना करी. तेमनो श्री पुंडरीकाहि ८४ गणुधरो, २०६० वैक्षियतज्जिवाला मुनिओ, १२६५० वाहिमुनिओ, २०००० डेवली मुनिओ, १२७५० चडिनालिंग मुनिवरै, ६००० अवधिज्ञानी, ४७५० चौदपूर्वीओ, ४८००० साधुओ, भालीआहि ३००००० साधीओ, ३०५००० श्रावकी, ५५४००० श्राविकाओ — ए प्रभाणे परिवार हतो। पद्मासने छ उपवास करी भद्रा वहि तेसे अष्टापद पर्वतनी उपर प्रक्षु सिद्धिपद पाम्या। आसनसिद्धिक लब्ध ज्ञवो आ घीनाने ध्यानमां लाई ते वर्षीतप करे छे, तेनो सक्षिम विधि (तपावलीमां कव्या मुजर्य) आ प्रभाणे जाणुवो। एकांतरे उपवास करवा, पारण्युं ऐच्चासण्युं, ए वपत प्रतिक्षमण्य तथा पूजन वगेरे। ‘श्रीआदिनाथाय नमः’ आ पहीनी वीस नोकारवाली गणुवी, साथिया, प्रदक्षिण्या, भमासण्या आर आर, १२ लोगस्सनो काउसग्गा, इगण्य वहि आहमधी शहज्ञात कराय छे, त्रय चोमासीना छहु वगेरे अने वैशाख सुहि त्रीने छहु आहि यथाशक्ति तप करी पारण्युं करे। डामचउविहार करवेता। आनी सविस्तर घीना तपोरत्न महोदधि आहि अंथाथी जाणुवी लेवी।

ए प्रभाणे लब्ध ज्ञवो अभावीजनुं रहस्य जाणुवा उपरांत वर्षीतपनी, सुपात्र-दाननी, लाभान्तरायाहि कर्मभांधनी भीना जाणुवी कर्मना अंधथी अची सुपात्रदाननी लाल लेवा पूर्वक शील, तप, लावनानी निर्मल साधना करी अक्षय सुखमय मुक्तिपदने पामो ए ज हांडिक भावना।

पुरातन धतिहास अने स्थापत्य

प्राचीन लेख संग्रह (नव लेख)

संपादकः—

मुनिराज श्री जयन्तविजयल

(४१)^{३०}

सं. ११६३ जेष्ठ (ज्येष्ठ) सुदि १० श्री संडेक गच्छे लंप्रमहि देव्या जया च
श्रेयसे २ पत्न्या जिनमत्या कारितः ॥

सं० ११६३ना जेष्ठ सुदि १०ने हिवसे, श्री संडेक गच्छना, ३१ शेष प्रम्६
अने तेनी प्रथम भार्या जया हेवीना श्रेय भाटे, तेनी औश भार्या जिनमतीमे आ३२
भूर्ति भरावी.

(४२)

संवत् १२८८ वर्षे ज्येष्ठ सुदि १३ बुधे श्री खं(षं)डेक गच्छे श्रीयशोभदसूरि-
संताने दुःसाधश्रीउदयसिंहपुत्रेण मंत्रश्रीयशोब्रेण स्वमातुः श्रीउदयश्रियः श्रेयसे
मादडीप्रामचैये जिनयुगलं कारितं प्रतिष्ठितं च श्रीशानितसूरिभिः ॥

संवत् १२८८ ना जेष्ठ सुदि १३ने भुधवारे; श्री संडेकगच्छ अने श्री
यशोभदसूरिनि अभ्यायवाणा, 'दुःसाध' भिरुद्धारक श्री उदयसिंहना पुत्र भंत्री

३०, नं. ४१ अने ४२ना लेखा; 'ज्ञेधपुर' रेटना 'ज्ञेत्रा' परगणाना शुडा
(भालोतरा) नामना गामनी अहार अरथे भाष्यक द्वार आवेद यतिवर्थश्री राज
विजयलती सुन्दर अगीचीना धर देशसरमांनी ऐ जिनभूर्तिएना छे. तेमांने पहेजे
लेख, भू. ना. उनी डाढी आजुनी ऐही भूर्तिनी ऐडक पर अने घीने लेख तेनी पासेनी
सुन्दर भूर्ति (काउसङ्गीया) ती गाढी पर ऐहेदो छे.

भारवाडमा 'अरण्यपुरा (शिवगंग)' थी लगलग पश्चिममां वीश माईवि द्वार
'शुडा' नामनुं गाम आवेलु छे; ते 'भालोत्रा' नामना राज्यपुत्रोनी जगीरीनुं होवायी
'भालोतरा' एवा उपनामथी ओणभाय छे. 'शुडा' भां हाल लव्य जिनमंहिरो ३,
आवडोनां धर लगलग ३००, धर्मशाणा, उपाश्रयो, ज्ञानलंडारो अने श्रीज्ञवद्या ज्ञान
प्रथारक भंडल आहि छे. चार थोर्छ अने तथ थोर्छ एम कटूरे ऐ पक्षो छे के ने
ऐक घीजना उपाश्रयोमां ज्ञता नथी.

३१ 'अणुहिलपुर पाटण' नी नल्कमां आवेला "सांडेरा" नामक गामना नाम
उपरथी "संडेकगच्छ" निकल्यो लाय एम ज्ञाय छे. आ गामनुं पहेलां
'संडेकपुर' नाम हुनु, अने पूर्वकालमां त्यां सारा धनाद्य आवडोनी वस्ती हती.

३२ विशेषता : पद्मासनवाणी अने श्री तीर्थंकर लगवाननी भूर्तिनी जेवी
आ भूर्तिना जम्खा अंला उपर मुहुर्पत्तिनी आकृति अनेवी छे. एटले आ डार्चि पशु
गणुधर लगवाननी भूर्ति होय तेम ज्ञाय छे.

श्री यशोवीरि, पोतानी माता श्री उदयश्रीना ऐय माटे 'मादी' गामना जिन भंडिरमां पधरानना माटे जिनयुगल (काउसङ्गीयानु नेडलु)^{३३} करावु अने तेनी श्री शांतिसूरियज्ञे प्रतिष्ठा करी छे.

(४३)^{३४}

ॐ श्रीखं(ष)डेरकगच्छसूरिचरणोपास्तिप्रवीणान्वये ।

दुःसाधोदयसिंहसूरिलक्ष्माचकजाप्रदशाः ।

बिंबं शांतिविभोव्यकारं स यशोवीरो गुरुमंत्रिणा ।

मातुः श्रीउदयश्रियः शिवकृते चैःये स्वयं कागिते ॥ ?

जेष्ठ(ष) शुक्लत्रयोदश्यां वसुवस्वर्करसरे ।

प्रतिष्ठा (ष) मादीप्रामे चक्रे श्रीशांतिसूरिभिः ॥

सं० १२८८ वर्षे ज्येष्ठ (ष) सुदि १३ बुधे ।

३३ आनी ज्ञेहीना झीज काउसङ्गीया आ ज्ञ हेरासरमां भू. ना. इनी ज्ञभृष्टी आजुमां विराजमान छे. तेनी गाढी पर पशु ए ज संवत्-मिति अने ए ज हडीकतवाणा लेख छे. परंतु ए आ लेखनी साथे भरावर मणतो हेवाथी ते लेख अहीं आपत्तामां आव्यो. नथी.

आ बन्ने काउसङ्गीया अने झीज नशु ऐही जिनभृत्तिर्यो; लगभग वीशेह वरस पहेला, 'गुडा'थी नशु मार्घल हूर आवेला 'मादी' नामना गामना सीमाडानी ज्ञभीन भांथी प्रगट थयेक. गुडा निवासी यतिवार्य राजविजयज्ञे ते वजते प्रयास करी ए पांचे भूर्त्तिर्यो त्यांथी अहीं लानी, तुरतमां ज पोतानी अगीचीमां वगहेरासर करावीने तेमां पधरावेल छे.

३४ कुटनोट ३०मां ज्ञानेक 'गुडा' नामना गामथी लगभग नशु मार्घल हूर 'मादी' नामनु गाम आवेलु छे. तेना सीमाडामांना 'आंगशुवो' नामना अरट (३२)नी पासेना सारणेश्वर महादेवना हेरानी लमतीना आंगशुमां सुंदर नक्शी युक्ता आरासनी परिकरनी गाढी अने परिकरक्नो उपरनो भाग एम ए नंग पडेला छे; तेमांनी परिकरनी गाढी पर आ लेख ज्ञेहेको छे. परिकरनी गाढीनी लंआर्ध २४ धन्य, डोंचार्ध १२ धन्य छे अने— परिकरना उपरना भागनी लंआर्ध ३२ धन्य, डोंचार्ध १६ धन्य छे.

आ "मादी", नेधपुर रेटनी ज्ञेहार छुमतनु गाम छे, पशु ते 'पानडा' ना हाडारनी जगीरीनु गाम छे. 'मादी' मां हालमां एक आवडनु धर, जिनभंडिर के उपाश्रय नथी. सांलग्नवा प्रमाणे अहींना श्रावको पडेलां जगीरदारनी साथे अलुभनाव थवाथी गधैयो. (गाधितरो) धाढी उछाणा भरीने चाल्या गया छे. त्यारथी आज सुधी डार्छि पशु नैन त्यां रहेन गयेक नथी.

आ परिकरना ए भागो, थोडां वर्षो अगाउ 'मादी' गामना सीमाडामांनी ज्ञभीनमांथी निकल्या हुना. त्यांथी लानीने आ शिवावयमां राखेवा छे. सांलग्नवा प्रमाणे 'गुडा' ना श्रावको उपर्युक्त परिकर मेगवना भाटे धण्डे प्रयत्न कर्यो, परंतु

શ્રી સંઉરેકગચ્છના આચાર્યેનાં ચરણોની સેવા કરવામાં પ્રવીષુતાવાળા કુર્ગમાં ઉત્પન્ન થયેલ (તેના ભક્ત), ‘હુઃસાધ’ બિદ્ધધારક મંત્રી ૩૫‘ ઉદ્ધસિંહ’ ના પુત્ર અને તમામ રાજાઓના સમૂહમાં જેમની ક્રિતિ પ્રસરેલી છે, એવા મહામંત્રી ૩૬ શ્રી

પાવઠાના ઢાકાર તે આપના નથી. સાંસ્કૃતિક પ્રમાણે માદી ગામમાં બીજી ધણી જિત-મૂર્તિઓ જમીનમાં છે. તેમાંની થોડીક લોકોના દેખાવામાં આવી હતી, પરંતુ જગીરદાર ઢાકાર તે પાછી જમીનમાં છુપાવી દીધી છે, અને કોઈ પણ જૈન સાહુ કે આવકને તે સ્થાન દેખાડવાની તેમ તે સંઅંધી વાત કરવાની પણ મનાઈ કરી દીધી છે. અમે ‘ગુડા’ થી તે સ્થળ જોવા માટે ‘માદી’ ગયા હતા, પરંતુ ત્યાંના કોઈ પણ માણુસે તે સ્થાન અતાંયું નહિં. જે કે તે સ્થાનમાં હાલ જમીન ઉપર કાંઈ પણ દેખાય તેમ નથી. ઢાકારની મંજુરી લઈ જમીન જોદવામાં આવે તો મૂર્તિઓ જરૂર મળી આવવાની અંભાવના છે. માટે લાગવણ ધરાવનારાઓએ આ માટે અવસ્થ્ય ડાશિષ્ય કરવી જોઈએ.

૩૫ આ મંત્રી ‘ઉદ્ધસિંહ’ ‘ધર્કટ્ગોત્ર’ અને ‘સંઉરેકગચ્છ’ની આમનાયવાળો એક શાખક હતો. તેની ધર્મસ્પતીનું નામ ‘ઉદ્ધશ્રી’ હતું. મંત્રી ‘ઉદ્ધસિંહ’ ખૂબ ધનાદ્ય, મહાદેશશરી, શુરનીર અને ધર્મવીર હતો. તેણે અનેક વખત યુદ્ધ કરી લાયો શરૂઆતે પરાસ્ત કર્યા હતા. તેની શરનીરતાને જોઈને રાજાઓએ તેને “હુઃસાધ” એવું બીજું આપ્યું હતું. તેણે અનેક તાર્થીની મહોત્ત્વ પૂર્વક યાત્રાઓ કરી હતી અને ‘સંઉરેકગચ્છ’ના આચાર્યેના તે ભક્ત હતો. ઘણું કરિને તે ‘અલોર’ (અવાલિપુર) નો રહેવાથી હતો. તેનું સાસઙે ‘માદી’ ગામમાં હતું.

૩૬ મહામંત્રી યશોવીર ઉપર્યુક્ત ‘હુઃસાધ ઉદ્ધસિંહ અને ઉદ્ધશ્રી’નો સુખ્ય મંત્રી હતો. મંત્રી ‘યશોવીર’, અહુ યુદ્ધશાળા અને રાજનીતિને જાણુનારો હોવાથી તેને ‘મંત્રિશુરુ’, તથા વિદ્ધાનોનો આશ્રયદાતા હોવાથી “કલીન્દ્રાંધુ” આવાં બિદ્ધો મળેલાં હતાં. તે ઘણો વિદ્ધાન તેમજ ધનવાન પણ હતો. તેને મહામાત્મ ‘વસ્તુપાલ-તેજપાલ’ સાથે ગાઠ મિત્રાચારી હતી. મંત્રી વસ્તુપાલના પૂર્ણવાથી તેણે મહામાત્મ તેજપાલે ‘આખુ’ ઉપર ‘દેલવાડા’માં અંધાવેલ અપૂર્વ કારીગરીવાળા શ્રી ‘લૂણુવસહી’ નામક મંહિરની શિહ્ય સંઅંધી ભૂલોં જતાવી હતી. શ્રી ‘જિનહર્ષગણ્ય’ વિરચિત શ્રી ‘વસ્તુપાલ ચરિત્ર’માં મંત્રી યશોવીરના સંઅંધમાં કેટલુંક વર્ણન કરેલું છે. તેણે પોતાનાં ૧ માતા, ૨ પિતા અને ૩ પોતાના કલ્યાણ માટે ‘આખુ-દેલવાડા’ના ‘વિમલવસહી’ અને ‘લૂણુવસહી’ નામના મંદિરોમાં સુંદર કારણીવાળા ત્રણ દેનકુલિકા — દ્વીપો કરાવીને તેમાં જિનમૂર્તિઓ નિ. ચં. ૧૨૪૪ અને ૧૨૬૧માં પધરાવી હતી. તેમજ તેણે પોતાના ભોકાળમાં (માદીગામમાં) પોતાની માતાના કલ્યાણ માટે લભ્ય જિનાલય કરાવીને તેની વિ. ચં. ૧૨૮૮માં પ્રતિથા કરાવી હતી. પણીયી કાળજીમે કોઈ વેળા કોઈ કારણુથી તે મંહિરનો નાશ થયો હતો, અને તેમાંની મૂર્તિઓ ભૂમિમાં લંડાવવામાં આવી હતો. પાછો ઉદ્ધેષ્ય થતાં તેમાંની પાચ મૂર્તિઓ જમીનમાંથી પ્રગટ થઈ, કેવી

૫૪૯

શ્રી જૈન સત્ય અકાશ

વેશાખ

‘યશોવીરે’ પોતે પોતાની માતુશ્રી ‘ઉદ્યશ્રી’ના કલ્યાણ માટે ‘માદહી’ ગામમાં કરાવેલા જિન મંહિરમાં પદ્મરાવવા માટે, શ્રી શાંતિનાથ ભગવાનની સપરિકર મૂર્તિ ઉજ કરાવી. ॥ ૧ ॥ તેની ‘માદહી’ ગામમાં શ્રી શાંતિસૂરિલુણે વિ. સં. ૧૨૮૮ ના જેઠ સુદિ ૧૩ ને ખુધવારે પ્રતિષ્ઠા કરી છે. ॥ ૨ ॥

સં. ૧૨૮૮ ના જેઠ સુદિ ૧૩ ને ખુધવાર.

‘ગુડા’ની બગીચીના દેરાસરમાં પદ્મરાવવામાં આવી છે. તેમાંની એ ઉભી મૂર્તિઓ (કાઉસસગગીયા) માંની એકપરનો લેખ અહીં લેખાંક ૪૨ માં પ્રગટ કરવામાં આવ્યો છે.

૩૭ ‘ગુડા’થી એ માઈલ દૂર ‘દ્વારાપુરા’ ગામના જાંપામાં આવેલ પણ ‘માદહી’ ગામના તાખાના એક અરટ (રેટ)ના ઐતરના એક ખુશુમાં શ્રી શાંતિનાથ ભગવાનની મૂર્તિનું અંદિલ ઘડ પડયું છે. તેની એકપર લેખ નથી, પરંતુ હરણયનું લંઘન છે. એટલે મંત્રી ‘યશોવીરે’ લરવેલી સપરિકર શ્રી શાંતિનાથ ભગવાનની મૂર્તિ કદાચ આ જ હોય અને જમીનમાંથી નિકલ્યા પછી આમ જ રખડતી રહેવાથી અંદિલ થઈ ગઈ હોય.

(પૃષ્ઠ ૫૩૮ થી ચાહુ)

શરૂ થઈ જય તે વાતમાં ડોઈથી ના પાડી શકાશે નહિ. જ્યુ, તપ, ધ્યાન, યુરેવર્દન, વૈયાવરચ્ચ આદિ કિયાઓમાં જેમ તે ધ્યાન આવી શકે છે, તેવી રીતે ક્ષમાના વિચારોમાં તે ધ્યાન આવી શકે તેમાં નવાઈ શા?

લેખક તે અમુલખ ઝડપિના લખાણુમાં પણ જે મન દીધું હોત અને શ્વેતાભ્યર આગમોને ખોટી રીતે વગોવના અને પલિલગાલોને લડકાવવામાં તે લેખક મસ્ત ન બનેદો હોત તો તે જ લેખમાં ‘કિંચિત્ ભી ક્રોધ નહીં કિયા’ આવું જોસ્ફાર વાક્ય જે આખી કથાના સારઙ્ઘ છે તે હેણ્યા વગર રહેત જ નહિ. તે ઉપરથી ક્ષમાના મુદ્દાને જે સમજીત તો લેખકને સાચા એવા શ્વેતાભ્યરોની નિદા કરવી ન પડત.

“સમ્યાદકીય રિપણિયાં” માંની “સચેત હોજાયએ” શીર્ષક નોંધ

સંપાદકીય રીપણિયાં શ્રીમાન મીકનલાલજીના નામની જે ડીકા કરવામાં આવી છે તે ડેટલી બધી ખોટી છે તે હકીકત તે પત્ર (કે જેની નકલ લાં જ આપવામાં આવી છે તે) વાંચવાથી સમજી શકાય તેમ છે. ડેમકે તે પત્રમાં ક્રવળ પુસ્તકને મોક્ષક્ષતાં પુસ્તકનો ઉપયોગ માત્ર જણ્યાવેદો છે. હિગમ્બર પ્રતિમાઓને ખેડવી કે શ્વેતાભ્યર પ્રતિમાઓને લાવવી, અગ્ર હિગમ્બર વસ્તુઓને ખેડવી અને શ્વેતાભ્યર વસ્તુઓને લાવવી તે વાતની ગંધ પણ નથી. એ બધી કરતાં તો ચંદ્રનગાવતી સાથે જે સંબંધ જોડાયેદો છે તે તો લેખકની ચોરી જુદ્ધિતે જ જાહેર કરી રહ્યો છે. પણ આત્મ લેખાથી કે આવી ઝૂટ નીતિથી ધર્મરસ્થાનો કે તીથી આપણાં કરી લેવાતાં નથી તેમ જ ડોઈ પણ ન્યાય જ્ઞમજનારો એમાં કલ્યાણને સમજે પણ નહિ.

लुप्तप्रायः जैन ग्रन्थों की सूचि

कर्ता—श्रीयुत अगरचंद्रजी नाहटा, कलकत्ता

कई वष पूर्व दिगम्बर पंडित जुगलकिशोरजी मुख्तार सम्पादित “अनेकान्त” पत्र पढ़ने का सुअवसर मिला था। उसमें लुप्तप्रायः दिगम्बर जैन ग्रन्थों की सप्रमाण सूचि और उन अलम्भ्य ग्रन्थों के खोजनिकालनेवालों को पुरस्कार देने की योजना प्रगट हुई थी। उसे पढ़कर श्रेताम्बर समाज के भी सेंकड़ों ग्रन्थ जिनके होने के मात्र उल्लेख ही पाये जाते हैं पर उनका प्रतियां नहीं मिलती—उनकी सूचि बनाने की सहज इच्छा जागृत हुई, परन्तु साधनाभाव से उसे शीघ्र ही कार्यरूप में परिणत नहीं कर सका।

गत वर्ष जब मैं कलकत्ते में शा उस समय इस सम्बन्ध में लेख लिखकर साहित्यसेवी विद्वानों का ध्यान आकर्षित करने के विचार से, जैनधर्म प्रचारक सभा भावनगर के स्वर्ण ज्युबीली महोत्सव के उपलक्ष्म में “जैनधर्म प्रकाश” का विशेषांक निकलनेवाला था उसमें प्रकाशनार्थ “अलम्भ्य ग्रन्थों की खोज” शीर्षक एक लेख भेजा। परन्तु लेख विलम्ब से पहुंचने से उक्त अंक में प्रकाशित न हो सका। अतः उसको “जैन” पत्र में प्रकाशनार्थ भेजा। उसमें उस लेख का कुछ हिस्सा प्रकाशित होने के पश्चात् आगे उसका प्रकाशन नहीं किया गया, और वह अधुरा ही रहा।

इसके पश्चात् जब मैं बिकानेर गया, इस विषय में विशेष रूप से खोज करना प्रारम्भ किया, और उसके फल स्वरूप जितनो सामग्री संप्रद कर सका उसकी एक सप्रमाण (उल्लेखवाले ग्रन्थों के नामसह) सूचि तैयार की। पर उसे किसी गम्भीर जैन साहित्यसेवी विद्वान् सुनिमहागाज को दिखाये बिना प्रकाशित करना उचित नहीं समझकर, पाण्डित पूज्य मुनिराज श्री पुण्यविजयजी महाराज को वह सूचि अबलोकनार्थ भेजी और उन्होंने संशोधनानुसार उसे व्यवस्थित की, जो यहां प्रकाशित की जाती है।

इस सूचि में नोंधित ग्रन्थों में के कई तो सेंकड़ों वर्षों से ही अनुपलब्ध मैं, पर कई तो अभी १००-२०० वर्षों में ही दृष्ट हो गये हैं। भंडारों में खोज करने से उनके मिलजाने की पूर्ण सम्भावना है। अभी तक जैन समाज में साहित्य प्रेम जैसा चाहिए उसका १६मा भाग भी नहीं है। इसीसे सेंकड़ों जगह हस्तलिखित ग्रन्थों के भंडार हैं पर अधिकांश भंडारों के तो ताले ही लगे रहते हैं। न तो उनकी सूचि ही बनी है न समय पर किसी साहित्य प्रेमी के निवेदन करने पर भी वे ग्रन्थ देखने मिलते हैं। इसी कारण हमारे भंडारों में हजारों साहित्य-पुष्ट के होने पर भी साधारण साहित्य-प्रेमी की तो बात ही क्या, बड़े बड़े विद्वानों को भी उनकी सुवास लेने का सुअवसर नहीं मिलता। घर में अनेक रहने के होने पर भी हमें उनके लिये

बाहर भटकना पड़ता है। आशा है अब भी हम सत्य को समझकर हमारे प्रन्थस्तें की खोज में लग जायेंगे।

नन्दीसूत्र उल्लिखित अलभ्य ग्रन्थः—

उत्कालिक श्रुतः— १ कल्पाकल्प । २ चुद्ध (क्षुल्क) कल्प । ३ महाकल्प । ४ महाप्रज्ञापना । ५ प्रमादाप्रमाद । ६ पोरसी मंडल । ७ मंडल प्रवेश । ८ विद्याचारण विनिश्चय । ९ आत्मविभक्ति (विशुद्धि) । १० ध्यान विभक्ति । ११ संलेखनाश्रुत । १२ द्वीतरागश्रुत । १३ विहार कल्प । १४ चरणविधि (विशुद्धि) ।

कालिक श्रुतः— १६ क्षुल्क विमान प्रविभक्ति । १६ महाविमान प्रविभक्ति । १७ अंगचूलिका । १८ वर्गचूलिका । १९ विवाहचूलिका । २० अरुणोपपात । २१ वरुणोपपात । २२ गरुडोपपात । २३ धरणोपपात । २४ वेश्रमणोपपात । २५ वेलंघरोपपात । २६ देवन्दोपपात । २७ उत्थानश्रुत । २८ समुत्थानश्रुत । २९ नागपरिज्ञालिका ।

पाक्षिक सूत्र उल्लिखित अलभ्य ग्रन्थः—

३० आसीविष भावना । ३१ दृष्टिविष भावना । ३२ महास्वप्न भावना । ३३ चारणस्वप्न भावना । ३४ तैजस निसर्गी । ३५ नरक विशुद्धि (जे. सा. सं. इ.) । **प्राभृत ग्रन्थः—**

योनि प्राभृत—धारसने कृत (सं. १३०) प्र. ८०० (बृहत टिप्पनिका उल्लिखित)। सिद्धि प्राभृत । निमित्त प्राभृत । विद्या प्राभृत । प्रतिष्ठा प्राभृत । कर्मप्राभृत (कर्मप्रन्थ उल्लिखित) विज्ञानप्राभृत । कल्पप्राभृत (विविध तीर्थ कल्प उल्लिखित) । स्वर प्राभृत (आणांग टीका उल्लिखित) । नाट्यविधि प्राभृत (रायपसेणी टीका उल्लिखित) ।

निर्युक्तियः—

सूत्रप्रज्ञसि निर्युक्ति
ऋषिभावित निर्युक्ति

कर्ता

भद्रबाहु

उल्लेख

आवश्यक निर्युक्ति

”

”

असुयोगः—

लोकानुयोग

कालिकाचार्य

पंचकल्पमाण्ड्य

प्रथमानुयोग

”

जैनप्रभा, वर्ष १, प्र. १३०

संहिताः—

कालकसंहिता

”

”

१. बृहत्कल्प की किसी किसी हस्तलिखित प्रति में उसीका नाम महाकल्पसूत्र लिखा है। पर ये भिन्न भिन्न ज्ञात होते हैं।

२. उपलब्ध अंगचूलिया वंगचूलिया संभवतः पीछे के बने हुए हैं, उनकी प्राचीन से प्राचीन लिखित प्रति कव की मिली है इसकी खोज करना आवश्यक है। नन्दी की विद्यारणा से रायपसेणी सूत्र भी उपलब्ध रायपसेणी से भिन्न होना चाहिये। दृष्टिग्राद भी अलभ्य है पर वह बहुत पूर्व ही नष्ट हो चुका था अतः सूचिमें नहीं लिखा गया।

१६६२

लुभप्रायः जनयथेऽ श सूची

५४६

“जैन साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास” में उल्लिखितः

ग्रन्थ	कर्ता	उल्लेख की पृष्ठ संख्या
१ पंचकल्प		७५
२ ज्योतिषकरण टीका	पादलिपसूरि	८५
३ हरिवंश चरित्र	विमलसूरि	टि. १२४
४ नयचक्र	मल्लवादि	१३६
५ मानमुदा भंजन नाटक	देवचंद्रगणि	२८०
६ प्रबन्ध शत	रामचंद्रसूरि	३२२
७ नैषधकालवृत्ति	मुनिचंद्रसूरि	२४३
८ नाममाला	धनपाल	१९९

श्री कल्याणविजय जी कृत “आपणां प्राभूतो” लेखमें—(जैनयुग, वर्ष १, पृ. ८७)

गोविन्द निर्युक्ति । सिद्धिविनिश्चय (निषोथचूर्णि) । तरंगवती । मलयवती ।

मगधमेना । चेटकचरित्र (निषोथचूर्णि) । अशोकवती ।

ग्रन्थ	कर्ता	उल्लेख
चूडामणि श्लो. १६०००	श्राविड देश के दुर्विनीत राजा कृत	
वाबनप्रबन्ध तागगणादि	बप्पभद्रिसूरि	प्रभावक चरित्र
वसुदेव चरित्र	भद्रबाहु	देवेन्द्रसूरिकृत शान्तिनाथ चरित्र
तत्वार्थ भाष्य टीका	मल्लगणिरि	तत्वार्थ प्रस्तावना पृ. ४७
आचारांगविवरण	गन्धहस्ति ।	
आत्मानुशासन	जिनेश्वरसूरि	जै. सा. संशोधक, संड १ अ. १
श्रावकप्रज्ञसि	उमास्वाति	गण. शा. श० बृहद वृत्ति
आचार वह्नि	“	प्रवचन परीक्षा
प्रतिष्ठा कल्प	“	सकलचंद्र कृत प्रतिष्ठा कल्प
संसारदात्रानल वृत्ति	हरिश्चंद्र गणि	प्रश्नोत्तर पद्धति
प्रभावक चरित्र	पछ्छीवालगच्छीय आमदेवसूरि	पाटणमतपत्र
विधिकरणशतक	“ शांतिसूरि	२५ प्रश्नोत्तर ग्रन्थ
समाचारी	अभयदेवसूरि शि. परमानंद	“
रहस्य कल्पद्रुम	जिनप्रभसूरि	बीकानेर भंडारस्थ प्रति
बत्रीसी अंतर्गत ११	सिद्धसेन (३२ में २१ प्राप्त)	
सप्तसन्धान काव्य	हेमचंद्रसूरि	मेघविजयकृत सप्तसन्धान
वादानुशासन	“	

४५०	श्री जैन सत्य अकाश	वैशाख
कुशलशतसह अलंकार प्रबोध ठाणगंगवृति	कुशलचंद्र अमरचंद्रसूरि जिनराजसूरि	हिन्दी जैन साहित्य इतिहास काव्यकल्पलतावृत्ति श्री सारकृत जिनराज मूरिगास ^१
श्री हरिभद्रसूरिकृत अलभ्य ग्रन्थः—		
गणधरसार्द्धशतक बृहदृवृत्ति उल्लिखित ग्रन्थ—अर्हत् चूडामणि । क्षेत्र समासवृत्ति । जीवाभिगमलघुवृत्ति । संप्रहणीवृत्ति ।		

हरिभद्रचरित्र उल्लिखित — अनेकान्तप्रथाङ्क । चैत्यवन्दन माला (संस्कृत) । धर्मलाभसिद्धि । परलोकसिद्धि । प्रतिष्ठाकल्प । बृहन्मिथ्यात्वमथन । लग्नशुद्धि । लोकबिन्दु । वीरस्तव । वीरांगद कथा । वेदवाद्यता निराकरण । व्यवहारकल्प । श्रावकप्रज्ञप्ति वृत्ति । श्रावकधर्मतंत्र । षट्कर्णी । संक्षिप्तचिसी (?) । संपूर्णचासिती ।

अन्यान्य ग्रन्थ — कर्मस्तववृत्ति । कुलक । क्षमावलीबीज । जंग्रीप्रज्ञप्ति टीका । ज्ञानपंचक विवरण (गाथासहस्री उल्लिखित) । तत्त्वार्थलघुवृत्ति । धर्मसारमूल टीका (प्रज्ञापता टीका उल्लिखित) । धर्मसंग्रहणी (स्याद्वादमंजरी उल्लिखित) । धूर्तील्यान । न्यायविनिश्चय । न्यायावतावृत्ति (प्रबंधकोष उल्लिखित) । पंचस्थानक (मध्यान्त न्यायाल्यान उल्लिखित) । मुनिपतिचरित्र । यतिदिनकल्प । यशोधरचरित्र । लघुक्षेत्रसमाप्त । संस्कृतामानु । सर्वज्ञसिद्धि—सटीक । स्याद्वादकुचोद परिहार । संबोध प्रकरण । भव्यवर पुण्डरीक (प्रश्नोत्तरपद्धति उल्लिखित) ।

श्रीमद् यशोविजयजी कृत अलभ्य ग्रन्थः

१ अध्यात्मविन्दु । २ अध्यात्मोपदेश । ३ अलङ्कार चूडामणि टीका । * ४ आकर * । ५ आत्मलयाति । ६ काव्यप्रकाश टीका । ७ छंद चूडामणि टीका । ८ ज्ञानसार चूर्णी । ९ तत्त्वालोक विवरण । १० त्रिसूत्या लोकविधि* । ११ द्रव्यालोक* । १२ प्रमारहस्य * । १३ मङ्गलवाद* । १४ लताद्रव्यम् । १५ वादमाला* । १६ वादरहस्य * । १७ विधिवाद* । १८ वीरस्तवटीका । १९ वेदान्तनिर्णय । २० वेदान्त विवेक सर्वत्वम् । २१ वैग्यरतिः । २२ शठ प्रकरणम् । २३ सिद्धान्त नर्क परिष्कार । २४ सिद्धान्तमङ्गी टीका । २५ स्याद्वाद मंजूषा । (स्याद्वाद मंजरी टीका) । २६ स्याद्वाद रहस्य* । २७ कूपदृष्टांत विशदीकरण* । २८ ज्ञानार्णव* (प्रपूर्ण कोडायभेदार) । (क्रमशः)

१. यह रास हमारी ओर सेप्रकाशित “ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह” में छप चुका है ।

२. जैनस्त्रोत्र सन्दोह प्रस्तावना पृ. ९८ में अलभ्य २७ ग्रन्थों की नोंध है उसमें मुनिवर्य श्री पुण्यविजयजी के सूचनानुसार विचार विन्दु उपलब्ध है अतः न० २६ तक के ग्रन्थ उक्त प्रस्तावना एवं न. २७-२८ जैनसाहित्यनों संक्षिप्त इतिहास के आधार से सूचि की गई है ।

* श्रीमद् के स्वयं रचित ग्रन्थों में इनका उल्लेख है ।

समाचार

पढ़वी प्रदान—

आचार्या॑ पढ़वी—आचार्या॑ महाराज श्री विजयविज्ञधसूरिण महाराजना शिष्य उपाध्याय महाराज श्री लक्षणविजयज्ञ तथा उपाध्याय महाराज श्री गंभीरविजयज्ञने सीहोर मुकामे चैत्र वर्षी पांचमना हिवसे आचार्या॑ पढ़वी आपवामां आवी छे.

प्रवर्तक पद—मुनिराज श्री हुर्दलविजयज्ञना शिष्य मुनिराज श्री उदोतविज्ञयज्ञने, आचार्या॑ महाराज श्री विजयप्रतापसूरिणना शिष्य मुनिराज श्री माणेकविजयज्ञने तथा आचार्या॑ महाराज श्री विजयभजिसूरिणना शिष्य मुनिराज श्री चंद्रविजयज्ञने द्योदा मुकामे चैत्र सुदी पांचमना हिवसे प्रवर्तक पद आपवामां आव्युं छे.

काण्डधर्म—

आचार्या॑ महाराज श्री विजयदानसूरिक्षरज्ञ महाराजना वयोद्युष शिष्यरत्न मुनिराज श्री नायडविजयज्ञ महाराज पाटण मुकामे चैत्रवर्षी चोथना हिवसे काण्डधर्म पाम्या छे.

मुनिमहाराज श्री विद्याविजयज्ञ महाराजना रिष्य मुनिमहाराज श्री दिमांशुविज्ञयज्ञ महाराज सिंध-करांची तरक्कि नियार करना लाला (सिंध) मुकामे चैत्र वर्षी छइना हिवसे काण्डधर्म पाम्या छे.

नवूं पे५२—

गर्भ महानार ज्यन्तीना रमरण्य इपे मुनामांथी “महाराष्ट्र जैन” नामनु पाक्षिक पत्र नीकण्डना भमाचार मल्या छे.

नवी आईस कोलेज—

अमदाबादमां शेठ श्री कर्तुरभाई लालभाईचे दा. ऐ लालनी करेली भमावनना पदिष्ठामे आवता जुन भक्तिनाथी शेठ लालभाई हलपतभाई आईस कोलेज राहि थशे.

कुसनी मुद्दत—

शौरीपुर तीर्थना अंगे श्वेतांबर अने हिगम्भरो वर्चे चालता केसना अंगेनी आगणी तारीख नवमी ओगस्टी राखरामां आवी छे.

सर्व धर्म परिषद्—

तानेतरमां द्वालया (पश्चिम झानदेश) मुकामे भजेली सर्व धर्म परिषद्मां जैनधर्म संभंधी आचार्या॑ महाराज श्री सागरानंदसूरीक्षरज्ञ महाराज तरक्की छिन्दी भाषानो निअंध मोडलगामां आग्यो द्यतो. श्रोडेसर सुइ तथा हर्मटोरने अंगेज भाषामां जैनधर्म संभंधी नियंद्या मोडल्या छता. तथा मुनिराज श्री न्यायविजयज्ञ (न्यायतीर्थ) ऐ त्यां लाजर रडीने जैनधर्म संभंधी पोतानो छिन्दी भाषानो निअंध वांची संभाषण्यो द्यतो. उपाध्याय श्री सुखसागरज्ञ महाराजे पण त्यां जैनधर्म संभंधी भाषण्य द्युर्दु द्यतु.

Regd. No. B. 3801

આજે જ મંગાવો !

શ્રી જૈન સત્ય પ્રકાશ

નો

શ્રી મહાવીર નિર્વાણ વિશેપાંક

પ્રભુ શ્રી મહાવીર દેવના
 જીવન સંખ્યા બિનાલિન વિદ્ધાનેનો
 લખેલા અનેક લેખાનો સંગ્રહ.

મુદ્રય :

ટ્રાન્સલાયર સાથે ૦-૧૩-૦
 એ ઇપ્યુસ આગ્રી, માલ્ડિ

થનારને ચાલુ અંક

તરફાં મળશે.

શ્રી જૈનવર્મ-

સત્યપ્રકાશ સમિતિ.

નેશિંગલાઇની વાડી, વીઠાંસા,

અમદાવાદ. (ગુજરાત)